ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 25 अक्टूबर 2015

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार 25 अक्टूबर 2015 से 31 अक्टूबर 2015

आ.शु. –12 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 43, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. नाभा में लगाया गया वैदिक चेतना शिविर

डी.ए.वी. सैंट पब्लिक (सीनीयर सैकंडरी) स्कूल नाभा के प्रांगण में छः दिवसीय ''वैदिक चेतना शिविर'' का आयोजन किया गया। इस शिविर के उद्घाटन पर विद्यालय की स्थानीय मैनेजिंग कमेटी के वाइस चेयरमैन श्री टी.सी. बत्ता जी को सादर आमंत्रित किया गया।

शिविर का शुभारंभ यज्ञ से किया गया। शिविर में कक्षा छठी व सातवीं के लगभग (105) छात्र–छात्राओं ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। शिविर में प्रतिदिन यज्ञ करने से पूर्व छात्रों को योगाभ्यास करवाया जाता था। तत्पश्चात् हवन प्रक्रिया में छात्र भाग लेते हुए प्रार्थना उपासना मंत्रों का उच्चारण करते हुए शान्ति पूर्वक यज्ञ करते थे। शिविर के पहले दिन विद्यालय में रक्त दान शिविर का आयोजन किया गया। जिस के द्वारा विद्यार्थियों को रक्त दान महादान का अर्थ समझाते हुए बताया गया कि रक्त दान के द्वारा कैसे हम जरुरत मंद लोगों को जीवन दे सकते हैं। 125 यूनिट रक्त दान करके इस रक्त दान शिविर को सफल बनाया गया। प्रतिदिन हवन के दौरान शिविरार्थियों को यज्ञ की महिमा के विषय में भी पूर्ण रूपेण जानकारी प्रदान की गई। विद्यार्थियों ने नगर की आर्य समाज में जाकर आर्य समाज व स्वामी दयानंद जी के बारे में कुछ जानकारी पुरोहित दिनकर आर्य जी से प्राप्त की। विद्यालय के प्रांगण में कुछ नन्हे पौधे आरोपित करवाते हुए वृक्षारोपण के विषय में जानकारी दी गई कि पेड़ पौधों के बिना कैसे मानव जीवन असंभव है।

स्वामी ब्रह्मवेश जी ने सभी शिविरार्थियों को बताया कि आप किस प्रकार अपने मन सेदृढ़ संकल्प करके अपने आप को उन्नत बनाया जा सकता है। स्वामी जी ने बच्चों को ऐसे उदाहरण बताए जिनमें प्रेरणादायक कहानियाँ थी। स्वामी जी ने कहा सभी बच्चे अपने आचरण के द्वारा ही अपना व देश का कल्याण कर सकते हैं।

समापन समारोह के अवसर पर सर्वप्रथम हवन प्रक्रिया द्वारा परमात्मा को याद किया गया। एक प्रश्नोत्तरी का आयोजन भी किया गया जिसमें सभी ने बढ़ चढ़ कर भाग ग्रहण किया। अंत में सभी शिविरार्थियों को जल पान करवाते हुए विजयी छात्रों को प्रमाण पत्र वितरण किए गए। प्रधानाचार्या श्रीमती मंजुला सहगल जी ने सभी शिविरार्थियों को शिविर के सफलतापूर्वक समापन पर आशीर्वाद दिया। शान्ति पाठ से शिविर का समापन किया गया ।

डी.ए.वी. साहिबाबाद में हिन्दी दिवस मनाया गया

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, साहिबाबाद में सप्ताह भर चले **'हिंदी भाषा महोत्सव'** का शुभारम्भ प्रधानाचार्य श्री वी.के. चोपड़ा जी ने किया। अपने संबोधन में प्रधानाचार्य श्री वी.के.चोपड़ा जी ने कहा कि भूमंडलीकरण के इस दौर में अनेक भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक है परंतु अपनी भाषा के ज्ञान के बिना यह संभव नहीं, उन्होंने कहा कि किसी भी देश की पहचान उस देश की भाषा है, देश की एकता और आखंडता हेतु हिंदी भाषा के योगदान की सराहना करते हुए उन्होंने विद्यार्थियों से हिंदी भाषा में रचनात्मक लेखन का आग्रह किया।

'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्ति को मूल'–के संकल्प के साथ में हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में कवि सम्मेलन, विचार गोष्ठी, निबन्ध लेखन एवं नृत्य–नाटिका आदि का मंचन किया गया। राज भाषा हिंदी के संवर्धन हेतु विचार गोष्ठी में अपने विचार रखते हुए विद्यार्थियों ने हिंदी की सहजता, वैज्ञानिकता एवं लोकप्रियता पर प्रकाश डाला। कहा गया कि भारत जैसे विशाल राष्ट्र के लिए जहाँ अनेक धर्म और परंपरा के लोग बसते हैं और जहाँ अनेक प्रांतीय भाषाएँ बोली और लिखी जाती हैं, हिंदी ही राष्ट्र भाषा बन सकती है। विश्व मंच पर दस्तक देती हिंदी और उसकी व्यापकता पर चर्चा करते हुए वक्ताओं ने कहा ने कहा कि आज हिंदी का दायरा बढ़ा है जिसमें साहित्य और सिनेमा की महत्वपूर्ण भूमिका है।

कवि सम्मेलन में विद्यालय के बाल कवियों ने अपनी कविताओं से श्रोताओं को मंत्र मुग्ध कर दिया तथा नृत्य–नाटिका की प्रस्तुति में युवा छात्राओं ने हिंदी की गरिमा पर भावपूर्ण अभिव्यक्ति द्वारा दर्शक दीर्घा में उपस्थित लोगों को सम्मोहित कर दिया।

डी.ए.वी. स्कूल पातड़ाँ ने शहीदों को किया नमन

आदरणीय प्रधान जी डॉ. पूनम सूरी जी के आदेशानुसार डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पातड़ां ने शहीद आजम भगत सिंह की प्रतिमा को अपनाया है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के जन्मदिवस पर स्वच्छता अभियान के अन्तर्गत भगतसिंह चौंक की सफ़ाई की गई। उसे अच्छी तरह रंगाया गया व फूल मालाएँ अर्पित की गई। नगर वासियों ने इस कार्य की भूरि–भूरि प्रशंसा की। नगर कौंसिल के प्रधान श्री प्रेम गुप्ता जी के साथ प्रधानाचार्या जी ने शहीद आजम सरदार भगत सिंह जी को श्रद्धा सुमन अर्पित किए और कहा कि हमें ऐसे अवसरों पर शहीदों को याद करना चाहिए। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती सुनीता शर्मा के इस कार्य की सभी अभिभावकों एवं पत्रकारों ने खूब प्रशंसा की तथा कहा कि ऐसे अच्छ कार्य तो डी.ए.वी. ही कर सकता है। विद्यार्थियों व अध्यापकों को चौंक पर खड़ा होकर इंकलाब जिन्दाबाद के नारे लगाए व राष्ट्रीय गीत भी गाया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – **पूनम सूरी**

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 25 अक्टूबर, 2015 से 31 अक्टूबर, 2015

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरिताति पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्य)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भक्त और भगवान

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में बात हो रही थी कि भक्ति के उत्पन्न होने से मिलाप होता है। वासनायें बुद्धि को बिगाड़ने वाली हैं। वासना का पूर्ण रूपेण विनाश होने के पश्चात् ही भक्ति मिलती है। वासना दो प्रकार की होती है। मलिन वासना से बार–बार जन्म होता है और शुद्ध वासना से जन्म और मरण का बन्धन समाप्त हो जाता है। पुण्य और पाप दोनों वासना बनकर चित्त में वास करते हैं।।

संन्यास और कर्मयोग दोनों में अधिक कल्याणकारी, अधिक श्रेष्ठ कर्मयोग है। कर्म के बिना वास्तव में कोई रहता भी नहीं। कर्म करो अवश्य, लेकिन कर्म से मुख न मोड़ो। ध्यान रखो तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है उसके फल की चिन्ता करने में नहीं। फल की इच्छा से कर्म न करो।

अब आगे...

इसी बात को श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण ने एक और प्रकार से कहा–

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते।।

(गीता 4 / 14)

कर्म के फल की मुझे इच्छा नहीं, इसलिए कर्म मुझे चिपट नहीं सकते– ऐसा जानकर जो कर्म करता है उसे कर्मों का बन्धन कभी बाँधता नहीं।

कर्म और इसके फल की बात तो बहुत सुन्दर ढंग से कही वेद भगवान् ने–

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतँ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

(यजु. 40 / 2)

इस संसार में मनुष्य यदि वेद के बताये हुए निष्काम कर्मों को करता हुआ सौ वर्ष जिये तो उसे कर्म लिपटता नहीं।

निष्काम कर्म का अर्थ है ऐसा कर्म जो आत्मभावना से किया जाये। इस भावना से किया हुआ कर्म, किये जाने के पश्चात् भी बन्धन उत्पन्न नहीं करता।

आत्मभावना से कर्म करना बहुत सरल नहीं। इसलिए मन्त्र में मनुष्य के लिए 'नर' शब्द प्रयुक्त हुआ है। नर का अर्थ क्या है? यह 'कठोपनिषद्' के ऋषि ने बहुत सुन्दर शब्दों में बताया। उन्होंने कहा–

विज्ञानसारथिर्यस्तु मनःप्रग्रहवान्नरः।

आत्म–ज्ञान को जाननेवाली बुद्धि जिसकी सारथि है और मन को जो लगाम की भाँति वश में रखता है, वह नर है।

आत्म–ज्ञान को जानने वाली बुद्धि का अर्थ है 'सात्त्विक बुद्धि' जिसे ऋतम्भरा कहते हैं। बुद्धि सात्त्विक हो, मन वश में हो, तभी मनुष्य 'नर' है; नहीं तो वह केवल एक प्राणी है, श्वास लेता है, जीता है। और यदि वास्तव में वह नर है तो कर्म उसे लिपटेगा नहीं, फिर प्रभु–दर्शन का मार्ग खुला है। ग्राण्ड ट्रंक रोड है यह। सीधे चलते जाओ, कोई रुकावट नहीं आयेगी। नर का एक अर्थ नेता भी है अर्थात् जो पथ–प्रदर्शक है। इन्द्रियाँ और मन जिसको अपने वश में करके नहीं चलतीं अपितु जो मन और इन्द्रियों को अपने वश में करके उन्हें मार्ग दिखाता है वह 'नर' है। इसी शब्द का एक और अर्थ 'इन्द्रियों में रमण न करनेवाला' भी है, अर्थात् जो प्रकृति–बन्धन से दूर रहकर, वासना के जाल में पड़े बिना केवल कर्त्तव्य की भावना से कर्म करता है, वह 'नर' है। आप एक अर्थ को मानिये या दूसरे को, एक बात निश्चित है कि नर बने बिना निर्वाह नहीं। नर बनोगे तो कर्म करते हुए भी कर्म लिपटेगा नहीं, नहीं बनोगे तो फिर यह कर्म पहले बन्धन को दृढ़ करता चला जायेगा। चित्त में बैठी हुई वासना ऐसे–ऐसे कर्म करायेगी जिन्हें आप करना नहीं चाहते, करके कई बार पछताते भी हैं।

जैसा कि मैंने आरम्भ में कहा, वासना के चार कारणों में से पहला कारण है कर्म। यदि कर्म में वासना नहीं और वासना में कर्म नहीं तो फिर वासना की समाप्ति निश्चित है क्योंकि इसकी नींव तो यहाँ से आरम्भ होती हैं, यहाँ से वह जन्म लेती है; शरीर, आयु और सुख–दुःख का रूप धारण करके फल बनती है; चित्त में बैठकर, इन्द्रियों का सहारा लेकर आत्मा को जन्म–मरण के चक्र में घुमाती रहती है। इसका जन्म ही न होने दो, फिर बेड़ा पार है।

यह वासना ही पहली रुकावट है जो आत्मा और परमात्मा के मध्य दीवार बनकर खड़ी है। यह है सबसे बड़ा शत्रु, सबसे बड़ा पाप। इससे बचो! बहुत भयानक है यह। जब तक इसका नाश नहीं होगा तब तक दुःखों का नाश भी नहीं होगा। परन्तु यह स्वयं तो समाप्त नहीं होती। तीन अवस्थाएँ हैं जिनसे होकर निकलना पड़ता है। पहली अवस्था है 'तत्त्वज्ञान'। यह जानना कि ब्रह्म क्या है? प्रकृति क्या है? प्रकृति की ओर से हटकर ब्रह्म की ओर जाना; दूसरी अवस्था है 'मनोनाश'। मन में उठते हुए

संकल्प और विकल्प को जहाँ वे उत्पन्न हों वहीं समाप्त कर देना; और अन्तिम अवस्था है 'वासनाक्षय'। पहली दो अवस्थाओं को पार किये बिना वासना का अन्त कभी होता नहीं।

ऋग्वेद के मन्त्र में इस वासना को शराब कहा तो इसलिए कि शराब जिस प्रकार मस्तिष्क को खराब कर देती है, उसी प्रकार यह वासना बुद्धि को नष्ट कर देती है। उसे सात्त्विक बुद्धि कभी नहीं बनने देती, सदा कुबुद्धि बनाये रखती है। शराब का अर्थ है नशा। यह नशा केवल अंगूरों के सड़े हुए रस में, भंग में, अफीम में या इस प्रकार की दूसरी वस्तुओं में ही नहीं, कई अन्य वस्तुओं में भी होता है। धन का नशा भी एक नशा है। राज का नशा भी एक नशा है। कोरे ज्ञान का और यूनिवर्सिटियों की डिग्रियों का नशा भी एक नशा है। एम.ए., डी.-लिट्., 'इट पिट', ए टु जैड, पता नहीं कितनी ही डिग्रियाँ हैं। परन्तु सुनो, ये सब नशे बुद्धि को भ्रष्ट करनेवाले हैं। इनसे अभिमान उत्पन्न होता है। अभिमान के होते ही व्यक्ति डूबता है– मैं बड़ा धनी! बड़ा ज्ञानी! बड़ा भारी भाष्यकार! चाहे शब्द–जाल तथा शब्दाडम्बरों के अतिरिक्त और कुछ न हो, फिर भी अभिमान! यह भयंकर है–

लेने को हरि नाम है देने को कुछ दान।
तारन को है नम्रता, डूबन को अभिमान।।

परन्तु इनमें से प्रत्येक वस्तु अभिमान के नशे को उत्पन्न करती है। धन या सोने के सम्बन्ध में महाकवि बिहारीलाल ने बहुत सुन्दर बात कही–

कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय।
वह खाये बौरात है, यह पाये बौराय।।

कनक कहते हैं सोने को और कनक कहते हैं धतूरे को। बिहारीलाल कहते हैं कि धतूरे से सोने में सौ गुणा अधिक नशा होता है। मनुष्य धतूरे को खाने के बाद पागल होता है, सोने को प्राप्त करके ही पागल हो जाता है।

यह सम्पत्ति ऐसा अभिमान उत्पन्न करती है कि धनवालों को फिर कुछ सूझता नहीं। आत्मा भी कुछ है, ईश्वर भी कोई वस्तु है, यह उसे स्मरण नहीं रहता। अपनी मनुष्यता भी वह खो बैठता है–

'ज़फ़र' आदमी उसको न जानियेगा,
वो हो कैसा साहबे–फ़हमो ज़का।
जिसे ऐश में यादे–खुदा न रही,
जिसे तैश में खौफ़े–खुदा न रहा।।

सम्पत्ति में विलासिता होती है, क्रोध होता है, अभिमान के कारण प्रभु–स्मरण नहीं होता।

यह 'दौलत' है दो लातोंवाली। आती है तो एक लात मनुष्य की छाती पर मारती है और वह इस प्रकार अकड़ जाता है कि अपने अतिरिक्त उसे कुछ दिखाई नहीं देता। जाती है तो एक लात पीठ पर मारती है। मनुष्य इस प्रकार झुक जाता है जैसे उसकी कमर टूट गई हो, जैसे संसार समाप्त हो गया हो।

परन्तु सुनो! दौलत के आने–जाने से संसार समाप्त नहीं होता। दौलत को संसार या संसार का सुख समझने वाले लोग यात्री की भाँति हैं जो डूबती नौका में बैठा हो। शायद उन्हीं के सम्बन्ध में किसी ने कहा–

कोई सोता हो जैसे डूबती किश्ती के तख्ते पर।
अगर कुछ है तो बस इतनी ही इस दुनिया में राहत है।।

हाँ, जो सम्पत्ति को संसार और संसार का सुख समझ बैठे हैं उनके लिए बस इतना ही सुख है, अन्यथा आत्मा का संसार बहुत विशाल है, प्रकृति के जाल में फँसा मनुष्य उसे समझ नहीं सकता। उसकी दशा यह है–

सुनी हिकायते–हस्ती तो दरमियाँ से सुनी।
न इब्तिदा की ख़बर है, न इन्तहा मालूम।।

नहीं, यह कहानी बहुत लम्बी है, अनन्त है। वासना की शराब से इसे गन्दा न करो, वासना तुम्हारी सबसे बड़ी शत्रु है।

परन्तु केवल एक शत्रु तो नहीं। वासना के साथ–साथ वह क्रोध भी रुकावट है जो गलत स्थान पर प्रयुक्त हो। ऐसा क्रोध प्रभु–दर्शन के मार्ग में सबसे बड़ी रुकावट है। आप कितना भी जप कर लीजिये, तप कर लीजिये, योग के आसन कर लीजिये; यदि अपने क्रोध पर आपका नियन्त्रण नहीं तो फिर यह जप, तप, योग, ध्यान सब व्यर्थ है। क्रोध करनेवाला क्या करता है– यह जानना है तो सोचिये कि एक कमरा है। आपने उसे बड़े यत्न से साफ़ किया है, बहुत प्रयत्न से उसे सजाया है। कहीं एक सुन्दर सोफ़ा बिछा दिया है, फ़र्श पर कश्मीर का कालीन बिछा दिया है। खिड़कियों पर सुन्दर रेशमी पर्दे लटका दिये हैं। दीवारों पर बहुमूल्य चित्र लटका दिये हैं। फूलों के गुलदस्ते रख दिये हैं। एक–एक स्थान को आपने रूमाल से रगड़कर देखा है कि कहीं कोई धूल तो नहीं रही? और सब–कुछ हो जाने के पश्चात् आपने उसमें आग लगा दी है। आग लगाने के पश्चात् क्या होगा, यह तो आप भी जान सकते हैं। यह क्रोध की अग्नि है जो सारे जप, तप, ज्ञान, ध्यान और योगसाधन को जलाकर राख बना देती है। क्रोध की अग्नि मस्तिष्क के उन सूक्ष्म तन्तुओं को जला देती है, जो सारे शरीर को चलाते हैं। कण्ट्रोलर का कार्यालय ही जल गया तब नगर का क्या बनेगा? इसलिए क्रोध से बचो! आजकल के वैज्ञानिकों ने अनुसंधान करके पता लगाया है कि जो व्यक्ति बराबर क्रोध करता है उसके रक्त में एक भयानक विष उत्पन्न हो जाता है। इस विष के कारण फोड़े–फुन्सियाँ निकलती हैं। त्वचा की बहुत–सी बीमारियाँ हो जाती हैं, अतः बचो इस क्रोध से!

परन्तु आप कहेंगे– आनन्द स्वामी! तू कहता है 'क्रोध से बचो' परन्तु वेद कहता है, "भगवान! तू क्रोध है, हमको क्रोध दे।"

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि,
वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।
बलमसि बलं मयि धेहि,
ओजोऽसि ओजो मयि धेहि।
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि,
सहोऽसि सहो मयि धेहि।।

हाँ भाई। कहा वेद ने, "तू मन्यु है, क्रोध है, मुझे क्रोध दे।"

परन्तु यह क्रोध किसलिए माँगा? क्या अपने घर के लिए? नहीं, बाहर के लिए, अन्याय के लिए, पाप के लिए, अत्याचार के लिए। उनके विरुद्ध क्रोध करना उचित है।

पाकिस्तान बना तो हैदराबाद के निजाम ने पहले भारत सरकार को कहा कि मैं भारत में सम्मिलित होता हूँ। बाद में कुछ लोगों के कारण उसने कहना आरम्भ किया कि मेरे साथ शर्तें निश्चित कर लो। मिस्टर मुन्शी वहीं थे। वह जो भी बात कहते, निज़ाम उसमें मीन–मेख निकाल देते। एक सप्ताह व्यतीत हो गया, दो सप्ताह चले गये, कई सप्ताह निकल गए इस बातचीत में, जिसका कोई अन्त दिखाई नहीं देता था। इसके साथ ही हैदराबाद में दिल्ली के लालकिले पर आसफशाही झण्डा लहराने के स्वप्न कासिम रिज़्वी देखने लगा। जब शान्ति से, प्यार से, प्रेरणा से, किसी भी विधि से निज़ाम सीधे मार्ग पर नहीं आए, जब वे और उसके साथी भारत में रहकर भारत से शत्रुता की बातें सोचने लगे, तब भारत के लौहपुरुष वल्लभभाई पटेल का क्रोध जागा। आज्ञा दी उन्होंने– "पुलिस ऐक्शन कर दो!"

मैं उन दिनों शोलापुर के डी.ए.वी. कॉलेज में था। कासिम–रिज़्वी की डींगें पत्रों में छप रही थीं। समाचार आ रहे थे कि निज़ाम ने बाहरी देशों से काफी हथियार मँगवा लिये हैं। सब लोग चकित थे कि अब क्या होगा? मैं चकित था। तभी शोलापुर की भारतीय सेना के कमाण्डर कैप्टन महाजन मिले। उन्होंने बताया कि वह भी सेना लेकर हैदराबाद में प्रविष्ट होंगे। मैंने पूछा, "कब?" वे बोले, "अभी पता नहीं? परन्तु मैं आपको साथ ले चलूँगा अपनी हथियारबन्द गाड़ी में।" तभी कुछ ही देर पश्चात् उनका सन्देश मिला, "आप तैयार रहिये।" उनकी आर्म्ड (Armed) कार में मैं उसके साथ चला। हैदराबाद की सीमा में प्रविष्ट हुए तो एक नदी थी सामने, उसे पार करना था। कैप्टन महाजन बोले, "अब आप मन्त्र पढ़िये, ईश्वर का नाम लेकर हम आगे बढ़ेंगे और यदि किसी ने रोकने का प्रयत्न किया तो भूनकर रख देंगे।" मैंने कहा, "ठीक बात है यह।" नदी के किनारे खड़े होकर मैंने मन्त्र–पाठ किया। कैप्टन महाजन से बोला, "अब चलिये, ईश्वर हमारे साथ है, वह हमारे देश को विजय देगा।" आरम्भ हो गई चढ़ाई। कहीं कोई रुकावट नहीं। भारतीय सेना हैदराबाद पहुँची तो निज़ाम साहब उसका स्वागत करने के लिए आ गये; बोले, "मैं तो आप ही की प्रतिक्षा कर रहा था। किसी भी शर्त की आवश्यकता नहीं, हैदराबाद भारत का अंग है। जैसे आप कहेंगे, वैसा मैं करूँगा।"

यह है यथार्थ रक्षा क्रोध, जो देश की रक्षा के लिए, धर्म की रक्षा के लिए किया जाए। इसके अतिरिक्त दूसरा क्रोध आत्मदर्शन के मार्ग में ऐसी रुकावट है जिससे बड़ी कोई रुकावट नहीं। परन्तु अब समय हो गया है इसलिए...

शेष अगले अंक में....

वैदिक प्रार्थना

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।।
अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु।।

अथर्व. 19.15.5–6

O God, make me fearless.
Let me not fear my friends or foes.
Let me not fear
from the known or the unknown
during day or night.
Let me not fear anyone
and let me have friends
on all sides.

अभय करो प्रभु, अभय करो हमें।
भूमि से न भय हो, आकाश से न भय हो।
मित्रा से न भय रहे, शत्रु से न भय हो।
भय हो न सामने से, पीछे से न भय हो।
दायें से न भय हो, न बायें से ही भय हो।

दिन में न भय हो, न रात में भी भय हो।
शत्रु मेरा कोई न हो, सब ही दिशाएं मेरी
मित्रा बनें और मेरी मित्राता की जय हो!

"आश्रम"

● हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक'

महाभारत काल के समय तक वैदिक शास्त्र के अनुसार आश्रम तीन ही था। 1– गृहस्थाश्रम, 2– वानप्रस्थ और 3– सन्यास आश्रम। उन दोनों आश्रमों से वैदिक धर्म का प्रचार एवं योग–यज्ञ लोग करते और कराते रहते थे। किन्तु महाभारत युद्ध के पश्चात् 2500 वर्ष पूर्व बौद्ध और जैन काल के समय जैनी शिल्पियों ने मूर्त्तियाँ बनानी आरम्भ कर दीं, तभी से उस समय के अल्पज्ञ ब्राह्मणों ने भी समय–समय पर ऋषियों के नाम से वेदादि शास्त्रों के विपरीत 18 पुराणों की रचना कर डाली, जिसमें देवी–देवताओं के सम्बन्ध में 'सत्यासत्य' अनेक रोचक एवं सृष्टिक्रम के विरुद्ध कहानियाँ रची गईं। जिन्हें उस समय के लोगों को (सत्य नारायण जैसे) कथाओं के रूप में प्रचारित किया जाने लगा। इसके अलावा उन्हीं पुराणों के आधार पर ब्राह्मणों ने ब्रह्मा, विष्णु, महेश और देवी दुर्गा, काली, सरस्वती, लक्ष्मी और श्रीगणेश आदि की मूर्त्तियाँ क्षत्रिय आदि राजाओं से मिलकर मंदिरों को बनवाकर उनमें स्थापित करने लगे और लोगों से पूजापाठ करवाने लगे। उस समय के कतिपय राजा एवं क्षत्रिय आदि विद्वजन वैदिक ज्ञान से बिल्कुल अनभिज्ञ नहीं थे। इतना अवश्य जानते थे कि ऋषि, संन्यासी और ब्राह्मण लोग पूज्य होते हैं वे जो भी कहते हैं सत्य वाक्य ही बोलते हैं, किन्तु उन्हें इनका ज्ञान नहीं था कि महाभारत के पूर्व उन्हीं ब्राह्मणों को पूज्य माना जाता था जिनको वेदादि शास्त्रों का सही ज्ञान होता था। (जैसाकि संदीपनी जी थे, जिनकी पाठशाला में श्रीकृष्ण जी विद्याध्ययन के लिए जाते थे) किन्तु उस समय के ब्राह्मण तो स्वार्थी बन गये थे। अपने पुराणों को ही सनातन धर्म सबको बताने लगे थे। (और वेद एवं वैदिक ग्रन्थों को बनारस आदि स्थानों में छिपा दिये थे) धीरे–धीरे वैदिक ज्ञान से रहित लोग क्षत्रियादि के कुल गुरु बन गये थे। उन्होंने सबको अपना यजमान और शिष्य भी बना डाला था। उन्होंने यहाँ तक कह डाला कि 'ब्रह्मवाक्यजनार्दनः' जो कुछ ब्राह्मणों के मुख से निकले, उसे जानो ब्रह्मा के मुख से निकला, और यह भी कहने लगे कि 'ब्रह्मद्रो ही विनश्यति' जो ब्राह्मणों से द्रोह करता है, उसका नाश हो जाता है। उन्होंने यह भी कह डाला कि वेद केवल ब्राह्मण ही पढ़ सकते हैं और औरों को देखने एवं पढ़ने का अधिकार नहीं है, जबकि स्वयं वेद कहता है:–

'ब्रह्मराजन्याभ्यां७शूद्राय चार्यय चस्वाय चारणाय' (ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, 456) अर्थात् वेदाधिकार जैसा ब्राह्मण वर्ण के लिये है वैसा ही क्षत्रिय, अर्य=वैश्य, शूद्र पुत्र, भृत्य और अति शूद्र के लिये भी बराबर है क्योंकि वेद ईश्वरीय ज्ञान है जो विद्या का पुस्तक होता है, वह सबका हितकारक है, और ईश्वर रचित पदार्थों के दायभागी सब मनुष्य अवश्य होते हैं। इसलिए उसका जानना सब मनुष्यों को उचित है, वह माल सबके पिता का सब पुत्रों के लिये है, किसी वर्ण विशेष के लिये नहीं।'

इस प्रकार एक तरफ जैसे ब्राह्मणों ने धर्मन्धता फैला रखी थी, उसी प्रकार मध्यकालीन तान्त्रिकों के समर्थक सायण और महीधर आदि ने वेदों के भाष्य का अनर्थ कर डाला। इनके देखा देखी जर्मनी और यूरोप देश के लिए संस्कृत का पंडित कहे जाने वाले ईसाईयों के पक्षधर 'मैक्समूलर' ने भी वेदों का अनर्थ कर दिया, (वेदों को भेड़ बकरी चराने वाले गड़ेरियों का गाना बताया, जैसा कि ईसाईयों के पूर्वज चराया करते थे) इन अनर्थों का लाभ पराधीन भारत के अंग्रेज इतिहासकारों ने उठाया। आर्यों की वैदिक सभ्यता को उन्हीं अनर्थों एवं पौराणिकता के आधार पर लिख दिया। इतिहास में बहुदेव वाद, एवं आर्यों को शिकारी, असभ्य घोषित कर दिया। क्या श्री राम, योगेश्वर श्री कृष्ण और शास्त्रकार 'कणाद मुनि, कपिल मुनि, जैमिनी मुनि, वेद व्यास जी, गौतम मुनि, पतंजलि मुनि तथा उपनिषदकार सब असभ्य थे? यह सब मध्यकालीन वेद विद्वानों के अभाव में अंगरेज इतिहासकारों ने आर्यों के साहित्य एवं उनके व्यवहार को मनमानी ढंग से लिख डाला है। जिसे आज भी उसी को हमारे पूर्वज बन्दर थे, मांसाहारी थे, यज्ञों में बलि देते थे, बिल्कुल वैदिक ज्ञान के विपरीत (वाममार्गी मतानुसार) विषयों को पढ़ाया जाता है।

जैसे भारत के इतिहास में अंगरेजों ने (भाष्यकारों के अनर्थ के कारण) अथर्ववेद को जादू–टोना का पुस्तक कहा वैसे ही कविकाल के जयदेव रचित गीत गोविन्द के रचना आदि में विद्वजनों के प्रतिरोध के अभाव में श्री कृष्ण की पत्नी रुक्मिणी को अलग कर राधा को उनकी प्रेमिका बना दिया। इस प्रकार देशी–विदेशी लोगों ने भारतीय आर्य संस्कृति–सभ्यता और साहित्य को बिगाड़ कर रख दिया।

धन्य है ऋषि दयानन्द को जिनका 19वीं सदी के प्रारंभ में आविर्भाव हुआ और अनर्थ किये गये वेदों को उद्धार किया और उसका सत्यार्थ प्रकट कर के निर्भय होकर संसार के सामने कहा कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। उसमें न किसी का इतिहास है, न जादू–टोना, और न कहीं प्रतिमा की पूजा, न पशुओं को मारने की आज्ञा है और न वह बहुदेव वाद है, उसमें जितने देवों के नाम आये हैं सब एकेश्वर शक्तियों के उपनाम है। वेद ने भी कहा है:–

'इन्द्रमित्र वरुणमग्निं दिव्यः स सुपर्णोगुरुत्मान्। एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।। (ऋग्वेद, 1, 164,46)

विप्रा=विद्वान् परमात्मा के (एकं सद्) एक होने पर भी (बहुधा वदन्ति) बहुत प्रकार से अर्थात् बहुत नाम से (उसको) कहते हैं। (अथ, उ) और (सः) उसी को इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, (दिव्य) अलौकिक (सुपर्णः) शक्तियुक्त (गुरुत्मान) गौरववाला (यम न्यायकारी और मातरिश्वातम) वायु (आहुः) कहते हैं। विशेष जानकारी के लिये देखें, 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रथम, समु.। उस समय के ब्राह्मणों ने जितने वेद विरुद्ध प्रथा को चलाया था उन सबका ऋषि दयानन्द ने खण्डन कर सुधार किया और सत्य विद्या को जानने के लिए सभी में एक नई चेतना नई जागृति उत्पन्न कर दी। ईश्वर प्राप्ति साधन के लिये सन्ध्योपासना अष्टांगयोग और वायुशोधन के लिये यज्ञ करने का उपदेश देते रहे।

बाल विवाह इन्हीं ब्राह्मणों ने प्रचलित किया था। आश्चर्य की बात तो यह है कि भारत में एक वर्ष से भी कम की दूध पीती बच्चियों की भी शादी कर दी जाती थी और वही फिर शीघ्र विधवा बन जाती थीं और हत्यारे माता पिता उस बच्ची के साथ विधवाओ का जैसा क्रूरता का व्यवहार शुरू कर देते थे। स्वार्थी लोगों ने छोटी बच्चियों का ही विवाह करना धर्म बतला दिया था, जैसाकि "शीघ्रबोध" में लिखा है– "अष्टवर्षा भवेद्गौरी, नववर्षा च रोहिणी। दशवर्षा भवेत कन्या तत ऊर्ध्वं रजस्वला।। माता चैव पिता चैव ज्येष्ठ भ्राता तथैव चा त्रयस्ते नरकं यान्तिदृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम्।। अर्थात्–आठ वर्ष की कन्या 'गौरी' कहलाती है, नौ वर्ष की 'रोहिणी' और दश वर्ष की 'कन्या'। इसके विवाह करने में पुण्य है और इससे ऊपर वह 'रजस्वला' कहलाती है जिसको देखकर माता पिता और बड़े भाई तीनों नरक को जाते हैं।

ये उन्हीं स्वार्थी पोपों की मनगढ़ंत बातें थीं, जिन्होंने देश में बाल विवाह प्रचलित करके विधवाओं की संख्या बढ़ा दी थी। इन महापापों के भागी यही लोग हैं। लेकिन धन्य है– ऋषि दयानन्द और आर्य समाज को जिनके अनथक परिश्रम से बाल विवाहों का प्रचार अब कम हो गया है। किन्तु अभी भी बहुत से कुसंस्कारी घराने ऐसे हैं जिनमें विधवाओं की बड़ी दुर्दशा होती है। उस अभागिनी के कोई कमाने वाला तो नहीं होता, इसलिये वह दीन और दुःखी रहती है, क्योंकि धन के बिना संसार में सुख कहां? उस बेचारी को न तो फिर माँ बाप आश्रय देते हैं और न सास ससुर। वे तो उल्टा यह और कहते हैं कि इसी डायन ने हमारे पुत्र को खा लिया। इस प्रकार सब ओर से ठोकर खाकर खाने वाली अभागिनियों को घर छोड़ना पड़ जाता था और उन्हीं जैसों के लिये विधवाआश्रम खोला गया ताकि आश्रम में रहकर कुछ काम कर सकें।

इसी प्रकार वृद्धाश्रम भी खोला गया। इन आश्रमों की आवश्यकता तब हुई जब भौतिकी शिक्षा और 200 वर्ष तक अंग्रेजों की सभ्यता ने भारतवासियों को अपने रंग में रंग दिया, और तभी से भारतीय संस्कृति सभ्यता को नवीन विद्यार्थी भूलने लगे। संस्कृत तो दूर की बात रही, राष्ट्रभाषा हिन्दी को छोड़ बालकों के माता पिता अंग्रेजी पाठशालाओं में भर्ती कराने लगे। इसलिये कि अंग्रेजी भाषा की सब जगह कद्र है, उससे विज्ञान को भी समझा जा सकता है। तो क्या हिन्दी के माध्यम से विज्ञान को नहीं समझा जा सकता? क्या– प्रतीक्षालय, गणक यन्त्र, दूरदर्शन, दूरभाष, जल और ताप विद्युत, पातालरेल आदि हिन्दी शब्द नहीं हैं? वैसे और भी शब्द बन सकते हैं। वैदिक ग्रंथों में तो ऋषियों ने यानों, यन्त्रों एवं अन्य विस्फोटक आदि अस्त्र शस्त्रों के अनेकों नामकरण किये हैं जिन्हें आज के विद्यार्थी देखना नहीं चाहते।

भारत में ही 'शून्य' का आविष्कार वेदों से आर्य भट्ट ने किया था। इसी प्रकार ई. पूर्व सैकड़ों आविष्कार हो चुके थे, जिनका लाभ विदेशियों ने उठाया। अतः भारत के छात्र भूल जाते हैं कि इसी आर्यावर्त भारत देश के ऋषियों ने विज्ञान का बीजात्मक ज्ञान एवं दर्शनों का सूत्रपात किया था। जिस प्रकार सर्व प्रथम बालकों के जन्मदाता और शिक्षा दीक्षा करने वाले उसके माता पिता ही होते हैं, इसी प्रकार गुरु के समान भारत को विद्यार्थीजन विदेशी शिक्षा सभ्यता से उसकी संस्कृति को भूल गये हैं और अपने माता पिता को मोम, मम्मी, डैड–डैडी कहने लगे हैं, जिसका अर्थ न माता होता है न पिता! इन्हीं विदेशी संस्कारों ने माता पिता के प्रति श्रद्धा और सेवा से वंचित कर दिया। भारत में बहुत से परिवार ऐसे हैं जो अपने वृद्ध पिता माता की कद्र नहीं करते, उन्हें कोई ठीक से पूछता नहीं, क्या हुआ है, भोजन किये कि नहीं, बिना। बिना मच्छरदानी के उन्हें सोने के लिए स्थान दिया जाता है। जब उन्हें बेटे बहुओं से कष्ट होने लगते हैं तब वे लाचार होकर वृद्धाश्रम में चले जाते हैं।

इसी प्रकार जो बच्चे अनाथ होते हैं उन्हें अनाथालय में दे दिया जाता है। जिन बच्चों को कोई पालन पोषण करने वाला नहीं होता जो असहाय होते हैं, उन्हें अनाथालय में दे दिया जाता है। बच्चों के अनाथ होने के अनेक कारण होते हैं। गरीब माता पिता बच्चे तो पैदा कर देते हैं पर उनकी देखभाल जब ठीक से नहीं कर सकते तब लाचार होकर अनाथालय में दे देते हैं। अनाथालय में पल रहे बच्चे–बच्चियों के पालन–पोषण में कोई कमी नहीं रहती, उन्हें उसमें शिक्षित भी किया जा रहा है ताकि उनका भविष्य उज्ज्वल हो।

इन अनाथालयों एवं आश्रमों को आश्रय, स्थान और चलाने वाले कुछ अमीर लोग एवं दानी दाताओं से चलता रहता है।

मु.पो. मुरारई, जिला–वीरभूम (प. बंगाल) 731219, मो. 8158078011

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका– कृपया गुण–कर्म स्वभाव की परिभाषाएँ बतलाइए। तीनों में क्या भेद है? ईश्वर के गुण–कर्म स्वभाव अलग–अलग बताइए। क्योंकि इनके ओवरलैपिंग होने के कारण कन्फ्यूजन रहता है?

समाधान– सही बात है। देखिए, कर्म तो स्पष्ट है। कर्म कहते हैं– क्रिया (एक्शन) को। एक मजदूर ने ईंटें उठाकर यहाँ डाल दीं। मिस्त्री ने ईंटों पर ईंट रखके मसाला डालकर दीवार खड़ी कर दी। यह तो कर्म है। यहाँ स्पष्ट है, कि क्रिया हो रही है, उसका नाम है– कर्म। अब विचारने के लिए दो बातें बचीं– गुण और स्वभाव।

स्वभाव का अर्थ होता है– 'स्व' का भाव, अर्थात् किसी द्रव्य के अपने गुण। जैसे– अग्नि में गर्मी। यह गर्मी, अग्नि का अपना गुण है, इसे 'स्वभाव' कहेंगे। 'गुण' किसी दूसरे द्रव्य से उधार लिया हुआ भी हो सकता है। जैसे– यदि पानी को अग्नि के सम्पर्क में गर्म कर दिया जाये, तो गर्म पानी में 'गर्मी' पानी का 'गुण' तो कहलाएगा, परन्तु उसका 'स्वभाव' नहीं। क्योंकि वह गर्मी, पानी ने अग्नि से उधार ले रखी है। इसी प्रकार से– जो किसी द्रव्य की विशेषता केवल अपनी है, उसे 'स्वभाव' कह देंगे। और जो बाहर से ले रखी है, उसको 'गुण' कह देंगे। गुण और स्वभाव में ज्यादा अंतर नहीं है। स्वभाव में भी गुण ही होते हैं। अंतर केवल इतना है, कि किसी द्रव्य के अपने गुण हैं, पर्सनल प्रापर्टी है 'स्वभाव'। और यदि किसी दूसरे द्रव्य से उधार ले रखे हों, उन्हें हम 'गुण' कह देंगे। गुण–कर्म स्वभाव की यह एक मोटी–मोटी परिभाषा हो गई।

अब ईश्वर की बात करते हैं। क्या ईश्वर कोई गुण दूसरे पदार्थ से भी धारण करता है, उधार लेता है? नहीं लेता। ईश्वर के जितने भी गुण हैं वे सारे उसके अपने हैं। इसलिए ईश्वर के संबंध में 'गुण और स्वभाव' में कोई अंतर नहीं।

और कर्म तो स्पष्ट ही है। ईश्वर सृष्टि बनाता है, न्याय करता है। लोगों को मनुष्य, पशु–पक्षी बनाता है– ये कर्म हैं। ईश्वर वेद का उपदेश देता है। उपदेश देना एक कर्म है। ईश्वर कर्म से अलग नहीं है। तो सार यह हुआ, कि ईश्वर के गुण और स्वभाव में अंतर नहीं है। परन्तु मनुष्यों में गुण और स्वभाव का अंतर दिखता है। जैसे जीवात्मा में इच्छा गुण है। कुछ इच्छाएं ऐसी हैं, जो हमारी अपनी हैं, स्वाभाविक इच्छाएं हैं– वह हमारा स्वभाव है। कुछ इच्छाएं ऐसी हैं, जो किन्हीं कारणों से उत्पन्न हो गईं, और वो हट भी जायेंगी। उदाहरण के लिए, सुख की प्राप्ति की इच्छा है। सुख मिलना चाहिए। यह तो स्वाभाविक इच्छा है। लेकिन खीर, पूड़ी, हलवा, लड्डू की इच्छा स्वाभाविक नहीं है। जब तक खीर, पूड़ी, हलवा में आपको सुख दिखता है, तब तब वह इच्छा रहेगी। जब उसमें दुःख दिखने लगेगा, वह इच्छा समाप्त हो जाएगी। जो नैमित्तिक इच्छाएं हैं, उन्हें 'गुण' कहेंगे। नैमित्तिक यानी किन्हीं कारणों से जो इच्छाएं पैदा हो गईं, तो वह 'इच्छा' गुण कहलाएगा। और जो सदा से अपना गुण है उसका नाम 'स्वभाव' है। जो अनादिकाल से जीव का अपना है। इच्छा है, प्रयत्न है, जो हमेशा से उसके अपने हैं, वह स्वभाव है। और जो किन्हीं कारणों से उसमें आ जाते हैं, पैदा हो जाते हैं, तो वो है– 'गुण'। जीवात्मा में ऐसी बात मिल जाएगी, प्रकृति में भी ऐसी बात मिल जाएगी। जैसे अभी बताया था– प्रश्न है– अग्नि के अंदर गर्मी अपनी है या बाहर से ले रखी है। उत्तर है– वह उसकी अपनी गर्मी है। जब चूल्हे के ऊपर पतीला रखकर पानी गर्म करते हैं, तो अब पानी में जो गर्मी आई वो पानी की अपनी है या अग्नि से ली हुई है? उत्तर है– अग्नि से ली हुई है। तो अब देखिए प्रकृति के अन्दर दोनों बातें देख रहे हैं। गर्मी, तापमान अग्नि का अपना है, इसलिए स्वभाव है। और पानी में वो अग्नि से आया हुआ है, इसलिये नैमित्तिक गुण है।

इस तरह हम गुण, स्वभाव, कर्म में अंतर समझ सकते हैं। ईश्वर के मामले में तो गुण और स्वभाव दोनों एक ही जैसे दिखते हैं। उनमें कोई अंतर समझ में नहीं आया। किसी द्रव्य में जो स्वाभाविक गुण होता है, वो उसे कभी नहीं छोड़ता। जो है, वह स्वाभाविक है। अग्नि का गुण गर्मी है, तो क्या वो अग्नि को कभी छोड़ देगी? नहीं छोड़ेगी। स्वाभाविक गुण कभी किसी द्रव्य को नहीं छोड़ता।

अब राग–द्वेष भी जीवात्मा का स्वाभाविक गुण = (दोष) मान लें, तो उसको छोड़ेंगे ही नहीं। नहीं छूटेगा, तो मुक्ति नहीं हो सकती। तो मुक्ति होगी, कि नहीं होगी, क्या समझते हैं? होगी न। तभी मुक्ति होगी, जब राग–द्वेष छूट जायेंगे। राग–द्वेष छूट जायेंगे तो यह स्वाभाविक गुण नहीं हुआ बल्कि नैमित्तिक हुआ।

शंका– समाधि लगने पर अन्तर्ज्ञान प्राप्त होता है। ऋषि–काल में ऋषि लोग अन्तर्ज्ञान से कैसे जानते थे?

समाधान– ऋषि लोगों को आंतरिक ज्ञान होता था। उदाहरण कोई भी सौ प्रतिशत साध्य के समान नहीं होता, यह नियम है। उदाहरण मोटे स्तर का होता है, और किसी अंश को समझाने के लिए होता है। आंतरिक ज्ञान कैसा होता है, इसे एक उदाहरण से ऐसे समझें। मान लीजिए, आप बिस्तर पर लेट गए। आंख बंद हो गई और गहरी नींद तो आई ही नहीं। नींद में शुरू हो गया स्वप्न। तो अब आप स्वप्न देखते हैं, तब आंखें तो बंद रहती हैं, फिर भी आपको अंदर से ज्ञान होता है। स्वप्न में चित्र दिखते हैं– एक महल हैं। उसमें बहुत से नौकर–चाकर हैं, बहुत सुंदर सजा हुआ है। बाहर चौकीदार खड़े हैं, अंदर राजा है। वो आराम से राजमहल में बैठा है। सभा लगी हुई है, बहुत सारे लोग उसकी सेवा कर रहे है। अब देखिए, स्वप्न में अन्दर का ज्ञान हो रहा है या नहीं? जैसे स्वप्न में अंदर से ज्ञान होता है, ऐसे ही ऋषियों को समाधि में अंदर से ज्ञान होता है। समाधि में जो ज्ञान प्राप्त होता है, वो ईश्वर की ओर से होता है। और स्वप्न में तो हमारे अपने संस्कार होते हैं, जिनको हम स्मृति के रूप में चित्र के रूप में देखते हैं। इस तरह से ऋषियों को आंतरिक ज्ञान होता है।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

जीवन में संस्कारों का महत्व

● आचार्य विश्वेन्द्रार्य

उपसर्गपूर्वक 'कृ' धातु से संस्कार शब्द बनता है। मानव जीवन को उच्च, दिव्य, एवं महान बनाने के लिए वैदिक संस्कारों का विशेष महत्व है। मानव की शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक उन्नति के लिए जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त 16 संस्कारों को करने का विधान हमारे ऋषि–महर्षियों ने वेदाज्ञा के अनुसार किया है।

'संस्क्रियते अलंक्रियते अनेन इति संस्कार' अर्थात् जिससे शरीर, मन एवं आत्मा अलंकृत, सुशोभित या परिष्कृत होते हैं, उत्तम और श्रेष्ठ होते हैं उसे संस्कार कहते हैं।

आज संस्कारों के अभाव में ही मानव पशु से भी निम्नतर स्तर को प्राप्त होता चला जा रहा है। उसने अपने मानवता रूप धर्म का परित्याग कर दिया है। स्वधर्म को त्याग कर के अर्थ को प्राप्त करने में अपना सब कुछ न्योछावर कर रहा है। उसकी धन के प्रति अतृप्त लालसा भाई को भाई, पिता को पिता, बहिन को बहिन नहीं समझ रही है, परिवार टूट रहे हैं।

आज एक दूसरे के लिए स्व प्राणों को भी न्योछावर करने वाले राम, लक्ष्मण, भरत जैसे भाई, श्रवण कुमार के समान मातृ–पितृ भक्त, भीष्म के समान दृढ़ प्रतिज्ञ, हरिश्चन्द्र जैसा सत्यनिष्ठ, दयानन्द जैसा त्यागी, तपस्वी, समाज सुधारक एवं अखण्ड ब्रह्मचारी दूर–दूर तक दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं।

मानव को सुखी बनाने के लिए अनेकों प्रकार के भौतिक साधनों को उपलब्ध कराया जा रहा है, क्योंकि आज के मानव की दृष्टि केवल भौतिक उन्नति तक ही सीमित रह गयी है। हम भौतिकवादी दृष्टिकोण के कारण समझ बैठे हैं कि मानव का सबसे बड़ा प्रश्न रोटी का प्रश्न है। यदि रोटी का प्रश्न हल हो गया तो सभी समस्याओं का समाधान हो गया। लेकिन भोजन, आजीविका एवं भौतिक साधन प्राप्त कर लेने पर भी संस्कारों के अभाव में व्यक्ति सुखी नहीं हो सकता ये शाश्वत सत्य है। संस्कारवान व्यक्ति भौतिक साधनों के अभाव में भी स्वयं को सुखी अनुभव करता है, क्योंकि संस्कारों के द्वारा ही 'शरीर, मन, एवं आत्मा उत्तम बनते हैं।' (स.प्र.स्व. म.प्र.)

किसी वस्तु के पुराने स्वरूप को बदलकर उसे नवीन स्वरूप संस्कारों के द्वारा ही प्रदान किया जाता है। महर्षि चरक लिखते हैं 'संस्कारो हि गुणान्तराधान मुच्यते' अर्थात् पहले से विद्यमान दुर्गुणों एवं दोषों को हटाकर उनके स्थान पर सद्गुणों के आधान करने को संस्कार कहते हैं। जिससे कि उसका शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम बने तथा मन में पवित्र भावना हो और सत्कर्मों को करके शारीरिक एवं आत्मिक उन्नति करता हुआ शरीर मन और आत्मा को सद्गुणों से अलंकृत करे।

जब बालक का जन्म होता है तब वह दो प्रकार के संस्कार अपने साथ लेकर के आता है, एक तो वे संस्कार हैं जिन्हें वह जन्म जन्मान्तरों से अपने साथ लाता है और दूसरे वे हैं जिनको अपने माता–पिता के संस्कारों के रूप में वंशपरम्परा से प्राप्त करता है, ये अच्छे भी हो सकते हैं और बुरे

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

श्री 'खुरसन्द'

● राहुल सांकृत्यायन

जिस समय की मैं बात करता हूँ उस समय वह स्वामी आनन्द नहीं हुए थे। स्वामी आनन्द होने के बाद मैंने फिर उनके दर्शन नहीं किये, यद्यपि उन्होंने अपना आश्रम इसी देहरादून जिले में बनाया है। 1916 ई. में मैं एक अपरिचित तरुण के तौर पर लाहौर पहुँचा। शायद आगरे के कुँवर बहादुर सिंह ने परिचय-पत्र लिख दिया था, अथवा बिना परिचय-पत्र के ही मैं खुरसन्द साहब से मिला। वह पंजाब के आर्यसमाज के मुख पत्र ''आर्य गजट'' के सम्पादक थे। उनसे पहली बार और पीछे जब-जब मिला, उससे यह मालूम हो गया, कि उन्होंने अपनी उपाधि ''खुरसन्द'' बिल्कुल ठीक रक्खी है। हर वक्त उनका चेहरा मुस्कुराता रहता था, मिलने पर पूछते थे- ''खुरसन्द तो है।'' लाहौर में जाकर मैं पहले एक मित्र के पास शहर के भीतर ठहरा था। पर मुझे डी.ए.वी. कॉलेज के संस्कृत विभाग में पढ़ना था, और ऐसे वातावरण में रहना चाहता था, जहाँ पढ़ने-पढ़ाने की चर्चा ज्यादा हो। एक-दो मुलाकात के बाद ही खुरसन्द साहब ने कहा-''यहीं चले आइये।'' अनारकली आर्य समाज के ऊपर बिस्तरा बिछाने भर की जगह मिलनी मुश्किल नहीं थी। मैं वहीं चला आया। खुरसन्द बहुत बेतकल्लुफ थे। बिना भूमिका के उनकी बात सुनकर अजनबी के हृदय में कुछ दूसरा ही भाव पैदा हो सकता था। मेरे पास न पैसा-कौड़ी था, और न अभी छात्रवृत्ति ही मिली थी। खुरसन्द जी ने उजुर करने का मौका भी नहीं दिया, और मैं उजुर कर भी क्या सकता था? पास की गली में पैसा अखबार के सामने वैष्णव होटलों की पाँती थी। लाहौर में उस समय वैष्णव होटल का अर्थ था निरामिष भोजनालय। होटल वाले बराबर खाने वालों का हिसाब महीने में कर लेते थे। गरम-गरम फुलके, दाल, दो भाजियाँ, चटनी और इतवार के दिन खीर भी दिया करते थे। घी का बन्दोबस्त खाने वाले अपने आप करते थे। ताला लगने वाले टिन के डब्बे में हरेक आदमी अपना घी वहीं रख छोड़ता था। खाते वक्त कटोरी में निकाल कर दे देता था, और रोटी बनाने वाला दाल-भाजी तुड़क कर इच्छा होने पर फुलकों में भी घी लगा कर दे देता था। पहले दिन खुरसन्द साहब ने यह सब अपने आप किया। खा-पी कर चले, तो कहने लगे -''तकल्लुफ करने की जरूरत नहीं, हम लोग कभी आगे-पीछे भी आ सकते हैं। यह लीजिये दूसरी चाबी, डब्बे में से घी निकाल कर खाना खा जाइये।'' यह रेगिस्तान में भूले भटके आदमी को घनी छाया के नीचे बैठा कर ठण्डे शर्बत का पिलाना था।

खुरसन्द साहब का जन्म पंजाब के जलालपुर जट्टा कस्बे में हुआ था। वह तरुणाई में आर्य समाज के विचारों से प्रभावित हुए। उस समय डी.ए.वी. कॉलेज जैसी कितने ही आर्य समाजी संस्थाएँ तपे हुए तपस्वियों का आश्रम बनी हुई थीं। सुशिक्षित तरुण अपने भविष्य की सभी खुशहाली और बड़ी-बड़ी उमंगों को छोड़ कर निर्वाहमात्र पर काम करते थे। महात्मा हंसराज ऐसे ही तपस्वी थे, जिन्होंने डी. ए.वी. कालेज की स्थापना के समय से उसकी सेवा की, और उन्हीं के हाथों वह एक विशाल कालेज के रूप में परिणत हो गया। खुरसन्द के हृदय में क्यों न सेवा के भाव पैदा होते? उन्होंने अपनी लेखनी आर्य समाज की सेवा के लिए अर्पित की, और ''आर्य गजट'' का सम्पादन कर रहे थे। मैं कुछ ही दिनों बाद विशारद श्रेणी में भर्ती हो गया। आश्रम में रहने के लिये स्थान और छात्रवृत्ति भी मिल गई, पर खुरसन्द जी से मुलाकात बराबर होती रही, उस यात्रा में और लाहौर की पिछली यात्राओं में भी। शायद उनके कहने पर मैंने भी कुछ लेख लिखे थे। वह देखते थे, इस तरुण में आर्यसमाज के प्रति स्नेह है और उसके मिशन के प्रचार करने की धुन है। यह दोनों बातें हममें एक समान थीं। आज भी वह आर्य समाज के एक प्रतिष्ठित संन्यासी हैं, और मैं कहाँ चला गया- अब पूरा नास्तिक हूँ।

यद्यपि मुझे आगे चल कर हिन्दी का लेखक बनना था, लेकिन उस समय मैं इसे नहीं जानता था। कितने ही लेख लिखे थे, लेकिन एक-दो को छोड़ कर सभी उर्दू में थे। खुरसन्द साहब की लेखनी में बड़ी शक्ति थी। वह बड़ी चुभती और फड़कती भाषा लिखते थे। उनकी भाषा ने मुझे अवश्य प्रभावित किया। पिछली यात्रा में देखा कि खुरसन्द साहब ने अपना एक दैनिक ''मिलाप'' निकाल लिया है। देखते-देखते ''मिलाप'' लाहौर के प्रमुख अखबारों में हो गया। फिर उर्दू के गढ़ से उसका हिन्दी संस्करण निकालना शुरू हुआ। घाटे का सौदा था पर, खुरसन्द हिन्दी ही पढ़ सकने वाले पाठकों-पाठिकाओं को वंचित नहीं रखना चाहते थे। राष्ट्रीय भावना और देश की आजादी का ख्याल उन्हें आर्यसमाज से मिला था। इसका प्रभाव उनकी अगली पीढ़ी पर पड़ा, और लड़का अपने उग्र राजनीतिक विचारों के कारण सरकार का कोपभाजन हुआ। पिता भी तो अपनी जवानी में इसी तरह का सपना देखा करते थे।

जिनका मैं 'कृतज्ञ' से साभार

(प्रस्तुतकर्ता-प्रचेतस)

☞ *पृष्ठ 05 का शेष*

जीवन में संस्कारों ...

भी हो सकते हैं।

वैदिक संस्कार मानव निर्माण की एक उत्तम योजना है। इस योजना में बालक को इस प्रकार के वातावरण से घेर दिया जाता है जिससे केवल अच्छे संस्कारों के पनपने का ही अवसर मिलता है, बुरे संस्कार चाहे पिछले हों या इस जन्म के हों अथवा माता, पिता, या मित्रों से प्राप्त हुए हों उन्हें निर्बीज कर दिया जाता है।

जिस प्रकार सोना, चाँदी, लोहा आदि धातुओं को अग्नि में डाल देने से उनकी अशुद्धता नष्ट होकर वे शुद्ध एवं निर्मल हो जाते हैं, ठीक इसी प्रकार से वैदिक संस्कारों के माध्यम से बालक, बालिका के विगत जन्मों के अशुभ कर्मों के वासना रूपी दोषों को दूर कर दिया जाता है और उन्हें सद्गुणों से युक्त कर दिया जाता है जिससे कि वह मानव जीवन के मुख्य लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर सके।

जीवात्मा जन्म-जन्मान्तरों में अनेकों प्रक्रियाओं से गुजरता है। प्रत्येक जन्म में इस पर अच्छे या बुरे संस्कार पड़ते हैं। वैदिक संस्कृति में आत्मा के पूर्व जन्मों के अशुभ संस्कारों को शुभ संस्कारों के प्रभाव द्वारा समाप्त किया जाता है। जिस समय एवं जिस क्षण भी जीवात्मा मानव शरीर के बन्धन में बंधता है उसी समय से और उसी क्षण से वैदिक संस्कृति उस पर उत्तम संस्कार डालना आरम्भ कर देती है और जीवात्मा जब तक उस मानव शरीर में विद्यमान रहता है तब तक उस पर श्रेष्ठ संस्कार निरंतर डाले जाते हैं। क्योंकि जिन संस्कारों का प्रभाव उस जीवात्मा पर अधिक होगा वह उसी प्रकार का आगे आचरण करेगा। उसके पूर्व जन्म जन्मान्तरों के संस्कार यदि अशुभ हैं तो उनको शुभ संस्कारों के अत्यधिक प्रभाव से दबा दिया जाता है।

उदाहरण के लिए दूब घास के तिनकों में अपनी गंध है लेकिन केसर की गन्ध की अपेक्षा से कम है। यदि दोनों को एक साथ रख दिया जाता है तो दूब घास स्वयं की गन्ध कम होने के कारण केसर की गन्ध को ग्रहण कर लेती है और दूब से भी केसर की ही गन्ध आने लगती है। इसी प्रकार केसर की गन्ध कम है प्याज की गन्ध की अपेक्षा से। यदि कुछ दिनों केसर एवं प्याज को एक साथ रख दिया जाता है तो केसर की गन्ध दब जाती है और उसमें से भी प्याज की गन्ध आने लगती है। तो पता चला जिसका जितना अधिक प्रभाव है वह कम प्रभाव वालों पर स्वयं का प्रभाव डालने में समर्थ होता है।

इसी प्रकार से पूर्वजन्मों के अशुभ संस्कारों को भी वैदिक संस्कारों की अधिकता के कारण उन्हें निर्बीज कर दिया जाता है। अतः श्रेष्ठ संस्कारों का प्रभाव मानव के जीवनपर्यन्त उसकी आत्मा पर विद्यमान रहता है।

जन्म से तो सभी शूद्र होते हैं, लेकिन (संस्काराद् द्विज उच्यते) संस्कारों के द्वारा ही मनुष्य द्विज अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य कहलाने का अधिकारी बनता है।

महर्षि प्रवर देव दयानन्द लिखते हैं- 'जिसे करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं और संतान अत्यन्त योग्य होते हैं। इसलिए संस्कारों का करना अति उचित है।' (सं.वि.भूमिका)

अतः स्पष्ट है कि संस्कारों के द्वारा ही शरीर, मन एवं आत्मा उत्तम बनते हैं और जब शरीर, मन एवं आत्मा उत्तम बन जायेंगे तो संतानों को भी अत्यन्त योग्य बनाया जा सकता है और जीवन के सर्वोपरि लक्ष्य मोक्ष सुख को प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए सम्पूर्ण मानव जाति का परम कर्तव्य है कि जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त स्वयं को उत्तम संस्कारों से घेरे रखे। क्योंकि संस्कारों से ही जीवन उच्च, दिव्य एवं महान बनता है।

धर्माचार्य-आर्यसमाज कमलानगर, आगरा
प्रेषकः प्राच्य वैदिक परिवार,
ऊँचा गाँव, पत्रा.- नसीरपुर, हाथरस (उ.प्र.)
चलभाष- 9719154615/9690624239

दिव्य-दानी : दयानंद

दिव्य-दान का दृश्य
दयानंद से दुनिया ने देखा।
विष-द को जीवन दे
मृत्यु-तट पे मुस्कान की रेखा।
यदि स्वार्थ या भय वश
जग को सत्य न ये बतलाते।
जग तो दम घुटता ही,
ये भी न अमर बन पाते।।

आर्य प्रहलाद गिरि
आसनसोल
9735132360

भारतीय नीतिशास्त्र और ऋषि दयानन्द

● भवानीलाल भारतीय

आचार्य भर्तृहरि ने धीर पुरुष की जो कसौटी निर्धारित की है उस पर ऋषि दयानन्द पूरी तरह खरे उतरते हैं। भर्तृहरि ने नीति शतक में लिखा कि नीति निपुण पुरुषों की चाहे निंदा हो या प्रंशसा, वे समान रहते हैं। धन की उन्हें परवाह नहीं रहती, वे लक्ष्मी के स्वामी बनें या दरिद्र रहें। जीवन और मृत्यु को समान समझने वाले ऐसे लोग ही वास्तव में धीर हैं।

हमारे देश में नीति ग्रंथों की प्रचुरता रही है। संस्कृत में प्रचुर मात्रा में नीति ग्रंथ लिखे गये। प्राचीनतम वैदिक संहिताओं में मागृधः, संगच्छध्वं संवदध्वम् जैसे नीतिपूर्ण आदेश यत्र तत्र सर्वत्र है। उपनिषदों में सत्य वद, धर्मचर, रयान्या प्रमदः आदि नीतिगत आदेश ही हैं। इनके अतिरिक्त विदुर, शुक्र, चाणक्य आदि रयान्सा के नीति ग्रंथ प्रचुर संख्या में हैं। महाभारत में शान्ति पर्व तथा अनुशासन पर्व नीति के सागर है। हिन्दी में रहीम, तुलसी, वृन्द के दोहे तो गिरधर तथा दीनदयाल की कुण्डलिया नीति के ही प्रस्तोता हैं। यहां तक कि पञ्चतंत्र तथा हितोपदेश जैसे नीति ग्रन्थ पशु पक्षियों की कल्पित कथाओं के ब्याज से लिखे गये हैं।

नीतिज्ञों में वरेण्य महात्मा विदुर ने शासक को चापलूसों से सावधान किया है। उन्होंने आपाततः मीठे बोलने वालों तथा यथार्थ को छिपाने वाले को शत्रु तुल्य बताया। ऋषि दयानन्द ने व्यवहारभानु में बैंगन का शाक खाकर प्रथम दिन हर्षोत्फुल्ल होने वाले किन्तु दूसरे दिन बीमार पड़ने पर अफसोस जाहिर करने वाले चापलूसों से सबको सावधान रहने के लिए कहा 'ऐसे मिष्ट भाषी लोग जो सत्य की उपेक्षा करते हैं बहुत मिलेंगे। किन्तु ऐसे लोग बहुत होंगे जो मीठा सच बोलते हैं किन्तु शिवाजी के कवि भूषण की भांति कम क्या दुर्लभ ही होंगे जो शाही दरबार में अहंकारी औरंगजेब को फटकार कर सकें और कहें मक्का के समान पवित्र पिता शाहजहा को पकड़कर गिरफ्तार किया। मानो मक्का शरीफ में तुमने आग लगा दी। ऐसे सत्यवक्ता, निपट कटु सत्य बोलने वाला यदि दुर्लभ है और तो श्रोता तो सर्वथा दुर्लभ ही है।

आचार्य भर्तृहरि ने धीर पुरुष की जो कसौटी निर्धारित की है उस पर ऋषि दयानन्द पूरी तरह खरे उतरते हैं। भर्तृहरि ने नीति शतक में लिखा कि नीति निपुण पुरुषों की चाहे निंदा हो या प्रंशसा, वे समान रहते हैं। धन की उन्हें परवाह नहीं रहती, वे लक्ष्मी के स्वामी बनें या दरिद्र रहें। जीवन और मृत्यु को समान समझने वाले ऐसे लोग ही वास्तव में धीर हैं।

उत्तम नीतिवाक्य को समन्तव्यामन्तव्य प्रकाश में बीज वाक्य (keynote address) के रूप में पेश किया। उनके स्वयं के जीवन पर दृष्टिपात करें–लोगों ने उनकी तथा उनके विचारों की निन्दा करने में कोई कसर नहीं रखी। उन्हें गुप्त वेश में गोरा–अंग्रेज, ईसाईयत का प्रचारक तक कहा। साथ ही यह भी सत्य है कि उनके जीवन काल में उनके विचारों की प्रंशसा भी कम नहीं हुई। सात समुद्र पार तक उनकी कीर्ति पताका लहराने लगी। सर्वस्व त्यागी संन्यासी होने के कारण लक्ष्मी के प्रति उनको कोई आकर्षण था ही नहीं। अपने पिता की लाखों की सम्पत्ति को ठोकरमार वे कर्म क्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे। मृत्यु और जीवन उनके लिए समान थी। समय आने पर सत्य न्याय और धर्म के लिए उन्होंने अपने जीवन को बलिदान किया। सच ही आचार्य भर्तृहरि की बताई कसौटी पर वे खरे उतरे और धीर पुरुषों में अग्रणी सिद्ध हुए।

अंधे राजा धृतराष्ट्र की रात बड़ी बैचेनी से, करवटें बदलते कटो। सवेरा होते ही द्वारपाल को नीतिमान् भाई विदुर को बुला लाने का आदेश दिया। राजा के समक्ष विदुर महाराज आये और आदेश की प्रतीक्षा में खड़े हो गये।

यह है विदुरनीति की प्रस्तावना। इस ग्रंथ को पढ़ने की संस्तुति ऋषि दयानन्द ने अपने पाठ्यक्रम विधान में की है। विदुर जी ने कहा– ऐसे दो व्यक्तियों के गले में तो पत्थर की शिला बाँध कर उन्हें पानी में डुबो देना चाहिए। ऐसी भयानक सजा का विधान नीतिज्ञ विदुर ने किनके लिए किया–

1. प्रथम वह जो धनवान तो है परन्तु दानी नहीं है।
2. दरिद्र होकर जो पुरुषार्थहीन है। परिश्रम कर अपनी उदर तृप्ति का साधन नहीं तलाशता। यहां अतपस्वी वह नहीं है जो पंचाग्नि नहीं तापता है अपितु परिश्रम न करने वाले को अतपस्वी कहा गया है। धन कमाने और वैध उपायों से धन संग्रह करने का अधिकार शास्त्रकार ने सबको दिया है। वह वैध उपायों से धनोपार्जन करे, यह कोई दोष नहीं है। यदि आपत्ति की बात है तो यह कि अपनी गरीबी का रोना तो पीटो परन्तु परिश्रम कर अपनी दरिद्रता को दूर करने के बजाए समाज के वैध साधनों से अर्जित धन को आज के साम्यवादियों की भांति distribute equary among all persons irrespective of the fuct whether they deserve this श्लोक है–

द्वावम्पसो निवेष्टव्यो गले बध्वादृढ़शिलाम्
धनवन्तम् अदातारम् दरिद्रम् च अतस्विनम्।।

विदुरनीति

3/5 शंकर कालोनी
श्रीगंगानगर

वेद विदुषी लोपामुद्रा

● शिवनारायण उपाध्याय

लोपामुद्रा महर्षि अगस्त्य की पत्नी थीं। उनके पिता विदर्भ देश के राजा थे। ऐसा दृष्टिगोचर होता है कि लोपामुद्रा बालकपन से ही आध्यात्मिक विषयों में रुचि लेती थीं। उन्होंने योग्य अध्यापिकाओं से विद्या प्राप्त की थी। वे ब्रह्मचर्य और विद्या के महत्व को समझती थीं। आश्रम और वर्ण व्यवस्था में उनका पूर्ण विश्वास था। इसलिए उन्होंने राजसी जीवन की उपेक्षा कर एक श्रेष्ठ विद्वान् तपस्वी अगस्त्य को अपने पति के रूप में चुना। इनके पुत्र का नाम दृढ़स्यु था। महाभारत वन पर्व अध्याय 94–95 में लोपामुद्रा विषयक एक आख्यान है। बृहद् देवता में भी लोपामुद्रा विषयक आख्यान है।

ऋग्वेद मण्डल 1 सूक्त 179 में उन्होंने अपने पति अगस्त्य के साथ कार्य किया है। ये दोनों ही इस सूक्त के दृष्टा हैं। इस सूक्त के मंत्रों में स्त्री के कर्त्तव्यों के विषय में बताया गया है। इस सूक्त में ब्रह्मचर्य के साथ विद्या ग्रहण करते हुए शरीर को सुडौल और दृढ़ बनाने की शिक्षा भी दी गई है। सूक्त के चौथे मंत्र में लोपामुद्रा शब्द पड़ा है जिसका अर्थ स्वामी दयानन्द सरस्वती ने काम भावना से मुक्त 'कन्या' किया है। सायण ने इस सूक्त को अगस्त्य–लोपामुद्रा संवाद के रूप में लिया है। विदुषी स्त्रियों के लिए उचित है कि प्रतिदिन रात्रि के पिछले प्रहर में उठकर प्रभात के समय घर के आवश्यक कार्य यथा गृह की सफाई, स्नान, सन्ध्यावन्दन आदि के साथ पति की सेवा के कार्य सम्पादित करें। मंत्र की पहली ऋचा में कहा गया है–

पूर्वीरहं शरदः शश्रमाणा दोषा वस्तोरूषसो जरयन्तीः।
मिनाति श्रियं जरिमा तनूनामप्यू नु पत्नीर्नृषणो जगम्युः।।

पदार्थ– जैसे (अहम्) मै (पूर्वीः) पहिले हुई (शरदः) वर्षों तथा (दोषाः) रात्रि (वस्तोः) दिन (जरयन्तीः) सबकी अवस्थाओं को जीर्ण करती हुई (उषसः) प्रभात वेलाओं पर (शश्रमाणा) श्रम करती रही हूँ। (अपिउ) और तो जैसे (तनूनाम्) शरीरों की (जरिमा) अतीव अवस्था को नष्ट करने वाला काल (श्रियम्) लक्ष्मी को (मिनाति) विनाशता है वैसे (वृषणः) वीर्य सेंचने वाले (पत्नीः) अपनी अपनी स्त्रियों को (नु) शीघ्र (जगम्युः) प्राप्त होवे। भावार्थ– जैसे स्त्रियां बाल्यावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक प्रभात काल में घर के सब कार्य करती हैं। विवाहित महिलाएं अपने पति की सेवा करती हैं। विद्या प्राप्ति के अनन्तर ही विवाह करके अपने अपने पतियों से श्रेष्ठ सन्तान को जन्म देती हैं। उन्हें अपने कर्त्तव्यों का उचित रीति के पालन करना चाहिए।

अगले मंत्र में बतलाया गया है कि शिक्षा किनसे प्राप्त करें?

ये चिद्धि पूर्वे ऋतसाप आसन्त्साकं देवेभिरवदन्नुतानि।
ये चिदवासुर्नह्यन्तमापुः समूनू पत्नीर्वृषभिर्जगम्युः ।।2।।

पदार्थ–(ये) जो (ऋतसापः) सत्य व्यवहार में व्यापक अथवा दूसरों को व्याप्त कराने वाले (पूर्वे) पूर्व विद्वान् (देवेभिः) विद्वानों के (साकम्) साथ (ऋतानि) सत्य व्यवहारों को (अवदन्) कहते हुए (ते, चित् हि) वे भी सुखी (आसन्) हुए और जो (नु) शीघ्र ही (पत्नीः) स्त्रीजन (वृषभिः) वीर्यवान् पतियों के साथ (सम् जगम्युः) निरन्तर जावें (चित्) उनके समान (अवासुः) दोषों को दूर करें वे (उ अन्तम्) अन्त को (नहि) नहीं (आपुः) प्राप्त होते हैं।

भावर्थ– ब्रह्मचर्य काल में विद्यार्थियों को उन्हीं से विद्या प्राप्त करना चाहिए जो पूर्ण विद्वान् एवं चरित्रवान् हों। विद्या समाप्ति पर उन ब्रह्मचारिणियों के साथ विवाह करें जो अपने तुल्य गुण कर्म और स्वभाव वाली हों।

शेष पृष्ठ 11

हमारा पर्यावरण व प्राणी जगत्

● मनमोहन कुमार आर्य

सारी दुनियां में पर्यावरण एक ऐसा ज्वलन्त विषय है जिसको लेकर बुद्धिजीवी वर्ग अत्यन्त चिन्तित व आन्दोलित है। ऐसा इस कारण से है कि पर्यावरण कोई साधारण समस्या नहीं है अपितु यह मनुष्य जाति व समस्त प्राणी जगत के जीवन मरण का प्रश्न है। यदि पर्यावरण को सुरक्षित व नियन्त्रित न किया गया तो मानव जाति सहित समस्त प्राणी जगत का भविष्य अनिश्चित, असुरक्षित, अन्धकारमय व विनाशकारी हो कर उसके अस्तित्व को समाप्त भी कर सकता है। पर्यावरण प्राणी जगत के लिए ऐसा ही है जैसा कि चेतन–तत्व जीवात्माओं के लिए अपने शरीर अर्थात् आत्मा के लिए मानव शरीर। ऐसा इसलिए है कि मानव शरीर उसमें निवास करने वाली जीवात्मा का एक प्रकार से पर्यावरण ही है। हम अपने शरीर की रक्षा के सभी उपाय करते हैं। स्नान करके इसे स्वच्छ रखना, शुद्ध वायु में श्वांस, शुद्ध जल का पान, पौष्टिक व सन्तुलित भोजन, समय पर सोना व जागना, पुरुषार्थ व तप, ईश्वरोपासना, मन व मस्तिष्क में सत्य व शुद्ध विचार, यज्ञ–अग्निहोत्र, माता–पिता की सेवा, परोपकार, समाज सेवा, निर्धनों की सहायता, भूखों को भोजन, अज्ञानियों को शिक्षा आदि सब कुछ करते हैं। इसका प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है, और वह स्वस्थ, निरोग, दीर्घजीवी, बलशाली, प्रतिष्ठित, यशस्वी, स्वावलम्बी, सुख व शान्ति से युक्त रहता है। जिस प्रकार हमारी आत्मा अर्थात् हमें, यह जड़ व मरणधर्मा शरीर स्वस्थ व निरोगी चाहिये उसी प्रकार से शरीर को स्वयं को स्वस्थ व निरोग रखने के लिए शुद्ध, सन्तुलित, प्रदूषण रहित, हरा–भरा प्राकृतिक वातावरण तथा शुद्ध अन्न–वनस्पति–ओषधियां चाहियें। यदि शरीर को स्वच्छ व प्रदूषण रहित वातावरण व पर्यावरण नहीं मिलेगा तो हमारे शरीर का अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा और जीवन के सामान्य कार्यों को करने के स्थान पर हम जीवन की पूरी अवधि इसे रोगों से बचाने व आ गये अनचाहे रोगों के उपचार आदि में लगे रहेंगे। सुख का नाम भी शायद जीवन में याद न रहे, ऐसी स्थिति पर्यावरण के प्रदूषित होने पर भविष्य में आ सकती है।

पर्यावरण सुरक्षा आज के युग की सबसे चिन्ताजनक समस्या है। इसके कुप्रभाव देश के अनेक भागों में सामने आने लगे हैं। पंजाब के एक स्थान या गांव का वातावरण ऐसा हो गया है जहां सबसे अधिक कैन्सर की महामारी के रोगी हैं। यहां से मुम्बई के लिए एक रेलगाड़ी चलाई जाती है जिसे लोगों ने कैंसर एक्सप्रेस तक का नाम दे दिया है। कारण है पर्यावरण में बिगाड़। देश के कुछ एक स्थानों में प्रायः सभी बच्चे विकलांग पैदा हो रहे हैं। 'सत्यमेव जयते' टीवी कार्यक्रम में ऐसे एक गांव के लोगों को दिखाया गया तो दर्शक अपने दिल को थाम कर बैठे थे, इस विवरण को सुनकर वह डरे हुए व सहमे हुए दिख रहे थे। वह ऐसे गुमशुम दिख रहे थे कि उस गांव के लोगों में उन्हें अपना भविष्य वहां के लोगों के समान दिखाई दे रहा था। पर्यावरण के खतरे की घंटी बज चुकी है। खतरे की उपेक्षा चल रही है। यदि यह जारी रही तो इसके अब तक से अधिक विनाशकारी परिणाम सामने आयेंगे जिसके लिए दोषी हमारे समय के पढ़े–लिखे, बुद्धिजीवी कहे जाने वाले बड़े लोग होंगे जिनकी सुख–सुविधाओं व जीवन शैली के कारण यह समस्या उत्पन्न हुई है।

पर्यावरण सुरक्षा आज के युग की सबसे चिन्ताजनक समस्या है। इसके कुप्रभाव देश के अनेक भागों में सामने आने लगे हैं। पंजाब के एक स्थान या गांव का वातावरण ऐसा हो गया है जहां सबसे अधिक कैन्सर की महामारी के रोगी हैं। यहां से मुम्बई के लिए एक रेलगाड़ी चलाई जाती है जिसे लोगों ने कैंसर एक्सप्रेस तक का नाम दे दिया है। कारण है पर्यावरण में बिगाड़। देश के कुछ एक स्थानों में प्रायः सभी बच्चे विकलांग पैदा हो रहे हैं। 'सत्यमेव जयते' टीवी कार्यक्रम में ऐसे एक गांव के लोगों को दिखाया गया तो दर्शक अपने दिल को थाम कर बैठे थे, इस विवरण को सुनकर वह डरे हुए व सहमे हुए दिख रहे थे। वह ऐसे गुमशुम दिख रहे थे कि उस गांव के लोगों में उन्हें अपना भविष्य वहां के लोगों के समान दिखाई दे रहा था। पर्यावरण के खतरे की घंटी बज चुकी है। खतरे की उपेक्षा चल रही है। यदि यह जारी रही तो इसके अब तक से अधिक विनाशकारी परिणाम सामने आयेंगे जिसके लिए दोषी हमारे समय के पढ़े–लिखे, बुद्धिजीवी कहे जाने वाले बड़े लोग होंगे जिनकी सुख–सुविधाओं व जीवन शैली के कारण यह समस्या उत्पन्न हुई है।

आइये, कुछ चर्चा हम पर्यावरण की भी कर लेते हैं। पर्यावरण, पृथिवी–अग्नि–जल–वायु–आकाश की समस्त प्राणी जगत के जीवन–आयु–स्वास्थ्य के अनुकूल शुद्ध व आदर्श स्थिति को कहते हैं। यदि हमारा वायुमण्डल शुद्ध व प्रदूषण से मुक्त है, नदियों, नहरों, कुओं, तालाब, सरोवरों, वर्षा व खेतों में सिचाई का जल भी शुद्ध व हानिकारक प्रभाव से मुक्त है, हमारी पृथिवी की उर्वरा–शक्ति अपनी अधिकतम क्षमता के साथ विद्यमान है, हमारे जंगल घने व सुरक्षित हैं, देश के 3/4 भाग में वन व सभी प्रकार के वन्य–जन्तु हैं, भूमि के शेष भाग में कृषि–खेत, नगर–गांव–सड़कें व उद्योग आदि हैं, खनन द्वारा भूमि का अनावश्यक व अनुचित दोहन नहीं होता है, वातावरण स्वास्थ्य के अनुकूल है, समय पर वर्षा होती हो, वर्षा का जल पीने योग्य हो तथा उसमें हानिकारक तत्व घुले हुए न हों, सभी ऋतुयें समय पर आती–जाती रहती हों, तो यह मान सकते हैं कि पर्यावरण ठीक व सामान्य है। आप की स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। अतः अब यह देखना आवश्यक है कि यह स्थिति उत्पन्न कैसे हुई? हमारी सृष्टि आज से 1,96,08,53,114 वर्ष पूर्व एक सत्य, चेतन व अपौरुषेय सत्ता द्वारा रची गई है। तभी से इस पर मानव वा प्राणी जगत भी है, वनस्पतियां, जल, अग्नि, वायु आदि सब कुछ है। आरम्भ में वायु मण्डल एवं पूरा पर्यावरण आदर्श रूप में था अर्थात् उसमें किंचित भी असन्तुलन या प्रदूषण नहीं था। जनसंख्या कम थी। धीरे–धीरे जनसंख्या में वृद्धि होने लगी। इस कारण, सम्भवतः एकान्त प्रियता या भीड़भाड़ से दूर रहने के स्वभाव के कारण, लोग दूर–दूर जाकर बसने लगे और आरम्भ की कुछ शताब्दियां व्यतीत होने के साथ पृथिवी के चारों ओर मानव पहुंच गये व अपने निवास स्थान पृथिवी के सभी भागों में बना लिये। **मनुष्य जहां रहता है वहां उसके शौच, रसोई या भोजन, वस्त्रों को धोने व अन्य कार्यों से जल व वायु में प्रदूषण उत्पन्न होता है।** हमारे प्राचीन ऋषि–मुनि प्रदूषण व पर्यावरण के बारे में बहुत सतर्क, सजग व सावधान थे। उन्होंने मानव जीवन पद्धति (life style) को कम से कम आवश्यकताओं वाली बनाया। वह जानते थे कि जितनी सुख की सामग्री प्रयोग में लायी जायेगी, उतना ही अधिक प्रदूषण होगा और उससे मनुष्य का जीवन, स्वास्थ्य व सुख–शान्ति प्रभावित होंगे। इसे इस रूप में समझा जा सकता है कि हमारी इन्द्रियों की शक्ति सीमित होती है। इसे जितना कम से कम प्रयोग करेंगे व खर्च करेंगे उतना अधिक यह चलेगीं या काम करेगी। जो व्यक्ति अधिक सुख–साधनों का प्रयोग करता है उसकी इन्द्रियाँ व शरीर के अन्य उपकरण, हृदय, पाचन–तन्त्र, यकृत–प्लीहा–लिवर–किडनी आदि प्रभावित होकर विकारों आदि से ग्रसित होकर रुग्ण हो जाते है। होना तो यह चाहिये कि हम तप, पुरुषार्थ, श्रम, योगासन, हितकर, शाकाहारी भक्ष्य श्रेणी का भोजन, अभक्ष्य पदार्थों का सर्वथा व पूर्णतया त्याग, स्वाध्याय, ध्यान व चिन्तन पर अधिक ध्यान दें जिससे हमारा शरीर स्वस्थ व सुखी रहे। **वायु व जल प्रदूषण को रोकने के लिए हमारे पूर्वजों ने एक ऐसी अनोखी नित्यकर्म विधि बनाई जो सारी दुनियां में अपनी मिसाल स्वयं ही है।** इसके लिए उन्होंने वेद मन्त्रों के उच्चारण के साथ गोघृत, स्वास्थ्यवर्धक वनस्पतियों, ओषधियों, सुगन्धित व पुष्टिकारक पदार्थों से दैनिक अग्निहोत्र का विधान किया। **इस अग्निहोत्र को करने से सभी पदार्थ अग्नि के संसर्ग से सूक्ष्म होकर वायु मण्डल में फैल जाते हैं।** वायुमण्डल में वायु के प्रदूषणयुक्त अणु–परमाणु यज्ञ की अग्नि से सूक्ष्म किए गये गोघृत, वनस्पति–ओषधि–सुगन्धित–पुष्टिकारक द्रव्य सामग्री के अणु–परमाणु से मिलकर प्रदूषण के प्रभाव को समाप्त करते थे। इससे वायुमण्डल अपनी आदर्श स्थिति–संरचना–composition में रहता था। इस प्रकार यज्ञ से उत्पन्न वायु–गैस–सूक्ष्मकणों के वायुमण्डल में चहुंदिश फैलाव से दूर–दूर तक का वायुमण्डल शुद्ध व पवित्र व रोगकृमि रहित हो जाता था। वर्षा होने पर वह यज्ञ के परमाणु–अणु व कण हमारी भूमि पर आते थे जो नाना प्रकार की वनस्पतियों, अन्न, पुष्पों व सभी प्रकार की ओषधियों की गुणवत्ता में वृद्धि Value edition करते थे। हम यह भी अनुभव करते हैं कि यज्ञ के प्रभाव का वनस्पति या समस्त प्राणी जगत पर अध्ययन व परीक्षण कर उससे होने वाले अच्छे प्रभाव पर अनुसंधान की आवश्यकता है। हम समझते हैं कि यदि ऐसा कोई अनुसंधान कोई वेद ज्ञानी, योगाभ्यासी व आधुनिक वनस्पति विज्ञान सहित सभी विषयों के वैज्ञानिकों का समूह करे, तो उससे मानव व प्राणी जगत कि लिए लाभप्रद अनेक नये तथ्यों पर प्रकाश पड़ सकता है और तब अग्निहोत्र की महत्ता व उपयोगिता और अधिक समझ में आ सकती है। यह तो निश्चित है कि वायु व जल का वनस्पतियों से गहरा सम्बन्ध है। यज्ञ से वायुमण्डल में जो गुणात्मक परिवर्तन होता है, उसका वनस्पतियों पर भी प्रभाव तो होगा ही। मनुष्यों द्वारा यह प्रभाव एक रूप में नासिका से सुगन्ध के ग्रहण द्वारा प्राप्त होता है। यज्ञ व अग्निहोत्र की यह सुगन्ध आरोग्यकारी होने के साथ फूलों के सुगन्ध से अधिक प्रभावकारी होती है। अब क्योंकि यज्ञ में वनस्पतियां, ओषधियां, गोघृत व शक्कर आदि मीठे व पौष्टिक अनेक पदार्थ भी डाले गये हैं, तो उनका प्रभाव भी मानव शरीर व जीवन पर निश्चित रूप से होगा। इस प्रभाव को वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध करने व जानने के

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

☞ पृष्ठ 08 का शेष

हमारा पर्यावरण ...

लिए यज्ञ–प्रेमियों को प्रयास करना चाहिये। इस संदर्भ में यह कहना भी उचित होगा कि हमने विदेशी पाश्चात्य संस्कार इतने अधिक ले लिये हैं कि वायु व वृष्टि के संशोधक अपने प्राचीन जीवनोपयोगी क्रिया–कलापों, कर्मकाण्डों व विधि–विधानों को तिलाजलि दे रखी है। उन पर विचार ही न करना हमारी घातक सोच है। आज हमारा वायु मण्डल अत्यधिक अशुद्ध है जिसका कारण उद्योगों से उत्पन्न धुएं, वाहनों में ईंधन के जलने से निकलने वाली हानिकारक गैसों तथा वृक्षों की कमी आदि हैं। इसी प्रकार से उद्योगों में अनुपयोगी पदार्थों व घरेलू अनावश्यक पदार्थों को जल में डाल कर बहा दिया जाता है जिससे वायु व जल दोनों प्रदूषित हो गये हैं। इनका सुधार तो हम अपनी आवश्यकताओं को सीमित करके व विज्ञान की सहायता से कर सकते हैं। अधिक संख्या में वृक्षारोपण कर भी समस्या को कुछ–कुछ कम किया जा सकता है। सरकार के साथ नागरिकों को अपना कर्तव्य पालन करना आवश्यक है।

आज सारा विश्व पश्चिम जगत के वैज्ञानिक और औद्योगिक उत्पादों के कुचक्र में फंसकर अपने स्वाभाविक व नैसर्गिक जीवन तथा धर्म–कर्म को भूल कर एव उसे छोड़कर प्रकृति का अधिक से अधिक दोहन व उससे उपलब्ध साधनों के उपभोग को ही जीवन की सफलता का पर्याय मान रहा है। इससे समाज में नाना प्रकार के रोग व दुःख उत्पन्न होकर मनुष्यादि प्राणी अल्पायु में अकाल मृत्यु के मुख में जा रहे हैं। विवेकहीन होने के कारण इसका प्रमुख कारण आवश्यकता से अधिक व अनेक अनुपयोगी प्रकार के भोग–पदार्थ जिसमें भव्य निवास, मोटर–गाड़ी, खर्चीले स्कूलों की पाश्चात्य मूल्य प्रधान शिक्षा, पुरुषार्थ रहित आरामदायक जीवन, बड़े बैंक बैलेन्स के साथ–साथ असमय का भोजन व खाना–पीना, अनियमित सोना–जागना, असन्तुलित व सीमा से अधिक दूरदर्शन, मोबाइल आदि का प्रयोग जिसका प्रभाव आंखों, कानों, मन, मस्तिष्क व शरीर के यन्त्र–तन्त्र पर प्रतिकूल रूप से पड़ रहा है। इनसे जीवन में होने वाले हानिकारक प्रभाव को पीड़ित व उसके परिवार वाले जान ही नहीं पाते हैं। डाक्टर आदि इस पर कुछ कम ही बताते हैं। हम समझते हैं कि जीवन को स्वस्थ व प्रसन्न रखने के लिए प्रातः 4 से 5 बजे के बीच उठना व रात्रि 10 बजे तक सो जाना, योगासन व व्यायाम करना, शरीर को स्नान आदि से स्वच्छ रखना, त्वचा पर किसी प्रकार के सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग न करना व केवल हर्बल प्रसाधनों का बहुत अल्प मात्रा में प्रयोग करना, अल्पमात्रा में शुद्ध व शाकाहारी पौष्टिक भोजन जिसमें पौष्टिक अन्न से बनी चपाती, चावल, दालें, हरी तरकारियां, दूध, दही, मट्ठा, सभी प्रकार के स्वास्थ्यवर्धक फल, बादाम, काजू, पिस्ता आदि हों, समय पर लेना या करना चाहिये। अग्निहोत्र यज्ञ से हमारे घरों का वातावरण भी पूर्ण शुद्ध रहना चाहिये, हमें अपने विचार भी शुद्ध व पवित्र रखने चाहिये जिसके लिए हमें वेद के विधान के अनुसार ईश्वरोपासना–सन्ध्या आदि भी करनी चाहिये। यदि ऐसा करेंगे तभी हम स्वस्थ रह सकते हैं अन्यथा रोगों का आक्रमण आयु की किसी भी स्थिति व अवस्था में हो सकता है।

हमारा पर्यावरण मुख्यतः पृथिवी, जल, वायु व आकाश का समूह है। हमारा भोज्य–अन्न शुद्ध भूमि में शुद्ध प्राकृतिक खाद व पानी से उत्पन्न होना चाहिये। आजकल खेतों में प्रयोग किये जाने वाले रासायनिक खाद व कीटनाशकों का छिड़काव भी हमारे स्वास्थ्य को बिगाड़ने व असाध्य रोगों को उत्पन्न करने का सबसे बड़ा कारण सिद्ध हुआ है। देश भर में एक मिथ्या विश्वास पैदा हो गया है कि रासायनिक खाद व कृत्रिम कीटनाशकों के छिड़काव से पैदावार अधिक होती है। वास्तविकता यह है कि हम प्राकृतिक खादों व कीटनाशकों से भी वही परिणाम प्राप्त कर सकते हैं और रोगों से बच सकते हैं। यद्यपि बुद्धिमान व विद्वानों को इस विषय से सम्बन्धित तथ्यों का ज्ञान है परन्तु कुछ विशेष कार्य होता दिखाई नहीं दे रहा है। रासायनिक खाद आदि के प्रयोग से उत्पन्न होने वाले अन्न से असाध्य रोगों में कैंसर, हृदय व मधुमेह आदि अनेक भयंकर रोग सम्मिलित हैं। बड़े व छोटे नगरों तथा ग्रामों तक कृत्रिम प्रकार का विषैला दूध, दही व घृत का प्रतिदिन विक्रय हो रहा है। आजकल मुनाफाखोरी के चक्कर में सब्जियों व फलों में विषैले इंजेक्शन लगाकर उनका आकार अल्प–समय में बढ़ा दिया जाता है। इससे एक ओर कुछ थोड़े से समाज विरोधी लोग मालामाल हो रहे हैं तो दूसरी ओर असंख्य लोग रोगों का शिकार होकर असमय मृत्यु का ग्रास बन रहे हैं। समाज के शत्रु धन के लिए ऐसे घिनौने काम करते हैं जिन्हें सरकारी तन्त्र के लोभ की प्रकृति वाले कर्मियों से सहयोग प्राप्त होता है। यह बहुत ही चिन्ताजनक व स्वाधीन देश के लिए अपमानजनक है। हमें लगता है कि हमारी व्यवस्था के संचालकों को लोगों की अनुचित व बुरी प्रवृत्ति का न तो पूरी तरह से ज्ञान है और न उसे समाप्त करने में उनकी दृढ़ इच्छा शक्ति ही दृष्टिगोचर होती है। भगवान भरोसे ही आज का मनुष्य ऐसी विपरीत परिस्थिति में जीवित है। अतः आवश्यकता है कि बाजार से खरीदी जाने वाले प्रत्येक वस्तु को लेने से पूर्व ग्राहक द्वारा उसकी शुद्धता की पूरी परीक्षा हो अथवा संदिग वस्तुओं का प्रयोग ही न किया जाये व अल्पल्प मात्रा में करें। बुद्धिमान लोग जानते हैं कि इन समाज विरोधी कार्यों में अशिक्षा व चारित्रिक गिरावट के साथ शीघ्र अधिक धन बटोरने का मनोविज्ञान काम करता है। इनका निवारण करना शिक्षा व समाज शास्त्रियों के साथ सरकार का काम है। यदि सरकारी मशीनरी ठीक काम करे और हमारी दण्ड व्यवस्था चुस्त–दुरुरत हो तो परिणाम कुछ अच्छे हो सकते हैं।

हमारे पशु, पक्षी व सभी मनुष्येतर प्राणी भी हमारी सृष्टि और पर्यावरण का अंग हैं। ईश्वर ने, जिसे हमारे नास्तिक बन्धु अज्ञान, हठ व दुराग्रह से 'प्रकृति' कहते हैं, मनुष्य को शाकाहारी प्राणी बनाया है। मनुष्यों के दांतों की बनावट शाकाहारी प्राणियों के समान है। मांसाहारी प्राणियों के दांतों की बनावट व आकृति शाकाहारी प्राणियों से अलग प्रकार की होती है। मनुष्य की भोजन पचाने की प्रणाली भी शाकाहारी प्राणियों के समान है। शाकाहारी पशु अपनी सारी आयु स्वस्थ व सुखी रहते हुए व्यतीत करते हैं। उनके सामने सामिष वस्तुएं या भोजन रखा भी जाये तो भी वह उसका प्रयोग नहीं करते। इसी प्रकार ऐसे लाखों निरामिष भोजी लोग हैं जिन्होंने अपने पूरे जीवन किसी सामिष पदार्थ का भक्षण नहीं किया और 80 व 100 वर्ष के बीच की आयु में भी पूर्ण स्वस्थ हैं। इससे सिद्ध होता है कि मनुष्य स्वभावतः सामिष भोजी नहीं है। सामिष–भोजी मनुष्यों की प्रकृति, स्वभाव, जीवन, स्वास्थ्य, चरित्र, मन व बुद्धि, काम की प्रवृत्ति यह सभी मांसाहार व मदिरापान आदि से कुप्रभावित होती हैं। सामिष भोजन करना व मूक प्राणियों को किसी भी प्रकार से दुःख देना ईश्वर व प्रकृति के प्रति जघन्य अपराध है जिसका दण्ड, न कम न अधिक, तो ईश्वर से समय आने पर मिलता ही है। अतः "जियो व जीने दो" के सिद्धान्त का पालन प्रत्येक मनुष्य को करना चाहिये। इस सिद्धान्त में अहिंसा तो है ही साथ में यह सृष्टि व प्रकृति को मानव जीवन के प्रति अधिक उपयोगी व सहयोगी बनाता है और मानव जीवन को सुखी, स्वस्थ व निरोग रखता है।

अब यह निश्चित हो गया है कि कृत्रिम रासायनिक खाद से हमारी कृषि भूमि की उर्वरा शक्ति अर्थात् अन्न उत्पादन की शक्ति व सामर्थ्य धीरे–धीरे कम व नष्ट होती है और जो अन्न प्राप्त होता है वह शरीर का पोषण कम करता है और साथ ही अनेक असाध्य रोग उत्पन्न कर जीवन को समय से पूर्व मृत्यु का ग्रास बनाता है। अतः कृत्रिम खादों का प्रयोग समाप्त कर और प्राकृतिक खाद का प्रयोग बढ़ाने के लिए योजनायें बनायी जानी चाहियें। कृषि नीति की समीक्षा कर ऐसे उपाय करने चाहिये जिससे आज के युवा कृषि कार्यों में अपना व्यवसाय चुनें। करने से क्या नहीं होता? यदि ऐसा करेंगे तब ही हमें स्वास्थ्यप्रद अन्न वा भोजन प्राप्त हो सकेगा अन्यथा विनाश व अन्धकार हमारे सामने उपस्थित है। दोनों में से एक हो ही चुना जा सकता है। इस क्षेत्र में जागरण इस प्रकार का होना चाहिये कि हमारे राजनैतिक व सरकारी लोग किन्हीं आर्थिक व अन्य कारणों से हमारे स्वास्थ्य से खिलवाड़ न कर सकें।

आजकल हमारे देश में लोगों के पास जो धन व सुख की सामग्री है उसमें भारी असमानता व अन्तर है। कुछ लोगों के पास अथाह धन व सुख के साधन है तो कुछ के पास जीने के लिए दो समय का भोजन भी नहीं है। करोड़ों लोग बिना पर्याप्त भोजन, शिक्षा व सुख–सुविधाओं के अपना जीवनयापन करते हैं। रोग होने पर ऐसे लोग बिना उपचार के मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। यद्यपि हमारे चिकित्सकों द्वारा चिकित्सक बनने पर यह शपथ ली जाती है कि वह हर रोगी का उपचार करेंगे परन्तु फिर भी आम आदमी डाक्टरों के पास जाने की हिम्मत नहीं कर पाता। आम आदमी तो क्या आज मध्यम श्रेणी का व्यक्ति भी डाक्टर के पास किसी छोटी से छोटी बीमारी का उपचार कराने के लिए जाते समय डरता है कि कहीं लेने के देने न पड़ जायें। आज चिकित्सा के नाम पर कुछ लोग लूट करते हैं। आवश्यक महंगे टैस्ट कराये जाते हैं, चाहे रोगी की सामर्थ्य हो या न हो। महंगी दवायें लिखी जाती हैं जिसका एक कारण इसमें कमीशन का लिया जाना भी होता है। इसमें कुछ सत्यता तो है ही। इसके अनेक उदाहरण भी सामने आ चुके हैं। यह एक प्रकार का चारित्रिक प्रदूषण है जो कि समाज व मनुष्य के अस्तित्व के लिए अत्यन्त हानिकारक है। इसे बढ़ने नहीं देना चाहिये अन्यथा यह मनुष्य में दया, करुणा, प्रेम, ममता, संवेदना आदि सभी कुछ समाप्त कर समाज के प्रत्येक मनुष्य को दूसरे के भोग की वस्तु बनाकर रख देगा। हमने ऐसी सत्य घटनायें सुनी, पढ़ी व जानी हैं जब चिकित्सक ने रोगी को बिना बताये उनकी किडनी निकाल ली और असत्य बात कह कर उसे समझाया गया कि उसके जीवन की रक्षा के लिए

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

पत्र/कविता

'राजा अश्वपति' की घोषणा हम भी कर सकते हैं यदि महर्षि दयानन्द के बताये मार्ग पर चलें

आजादी के 65 वर्ष बाद भी आज हमारा देश भारत जिसने विश्व को ज्ञान दिया, अर्थशास्त्र दिया, सभ्यता व संस्कृति दी चौराहे पर खड़ा है। चाहे बात आर्थिक विकास की हो, चाहे गरीबी मिटाने की और चाहे बात शिक्षा व स्वास्थ्य की हो या किसान, मजदूर गरीब के उत्थान की। इतना ही नहीं हमारा कृषि प्रधान देश भारत अपना मूल स्वरूप व मूल पहचान खोता जा रहा है। स्थिति यह आ गई है कि जब प्याज जैसी चीज भी हमें आयात करनी पड़ रही है।

हमारे इतने बड़े–बड़े अर्थशास्त्री व अन्य विशेषज्ञ क्यों नहीं खंगालते कौटिल्य के अर्थशास्त्र को क्यों नही खंगालते सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य की शासन व्यवस्था को और क्यों नहीं अध्ययन करते राम राज की व्यवस्था का जहां लिखा है–

जासू राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृप अविस नगर अधिकारी।।

गांधी, बुद्ध, गौतम, नानक, दयानन्द, राम, कृष्ण का देश आज भ्रष्टाचार में आकंठ डूबा है और ढाणी में बैठा अंतिम व्यक्ति आज 14 सितम्बर 2015 को भी शिक्षा रोजगार, स्वास्थ्य से दूर रोटी, पानी, कपड़ा व दवा का इंतजार कर रहा है।

देश की इस बीभत्स स्थिति पर हमारी सरकारें कब विचार करेंगी और कब हम हमारे देश के ही अनुरूप हमारी अर्थ व्यवस्था को दिशा देंगे। मेक इन इंडिया से ज्यादा महत्वपूर्ण है मेक ऑफ इण्डिया। क्यों नहीं इस पर अमल करें। सन 1947 व इससे पहले विश्व की अर्थ व्यवस्था में हमारा योगदान कितना था? 35 प्रतिशत। और रूपये की कीमत क्या थी? डालर के बराबर रूपया था। कौन रघुराज रामन इस पर विचार करेंगे और ऐसा कब तक होते रहेगा?

क्या हमारे ढाका की मलमल किसी भी कपड़े की मील में बन रही है। क्या हमारे देश की कृषि उपज अथवा कुटीर उद्योग किसी मुल्क से कम थे। नहीं कदापि नहीं। क्या महाभारत के प्रक्षेपास्त्र आज के प्रक्षेपास्त्रों से कम थे? नहीं उल्टा कई आगे थे।

ऐसे में अब एक ही रास्ता है भारत अपनी खुद की अर्थनीति बनाये वर्ल्ड बैंक या आई एम से दिशा निर्देश ना ले। हमारी अपनी भारत आधारित उद्योग नीति हो और हमारी ही जलवायु नीति। तब हम रोक पायेंगे किसान की आत्म हत्या,गांव से पलायन, बेरोजगारी, हिंसा व अत्याचार क्योंकि हमारा आदर्श है–

जीओ और जीने दो।

हमारे लिये विश्व बाजार नहीं परिवार है। हमारे ही देश के राजा अश्वपति ने उद्घोषणा की थी कि –

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यप।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान् न स्वैरि स्वैरिणी कुतः।।

क्या आज हम भी घोषणा कर सकते है। कदापि नही आज तो 02 वर्ष की बच्चियां तक बलात्कार की शिकार हो रही हैं, क्या यही है विकास? अब अगर हम चाहते हैं भारत वापस सोने की चिड़िया बने, वापस विश्व गुरु बने तो इसका रास्ता बताया है युग पुरुष महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने कि हम

(1) सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझें।
(2) सबसे प्रीति पूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य बर्ताव करें।
(3) प्रत्येक हितकारी नियम में स्वतंत्र तथा सामाजिक सर्वहितकारी नियम में परतंत्र रहें।
(4) स्वामी दयानन्द सरस्वती जी द्वारा बताये गाय के अर्थशास्त्र को ग्राम विकास व कृषि का आधार बना कर हम किसान, आत्महत्या व गांव का पलायन रोक सकते हैं। (पढे गोकरुणानिधि)
(5) सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने को तैयार रहें।
(6) सब काम सत्य व असत्य को विचार कर करें।
(7) संसार का उपकार करना हमारा उद्देश्य हो अर्थात, शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति (केवल रोटी, कपड़ा, मकान नहीं)।
(8) अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करें।

डॉ.श्रीगोपाल बाहेती

****

दयानन्द ने जो जगया न होता

दयानन्द ने जो जगाया न होता,
अविद्या से पीछा छुड़ाया न होता।

भटकते ही रह जाते आडम्बरों में,
नया रंग जीवन में आया न होता।

भुला बैठते अपनी ही संस्कृति को,
जो वेदों का डंका बजाया न होता।

शिथिल होके रह जाती जीवन की शक्ति,
प्रभु–भक्ति का प्यार गर पाया न होता।

दबे रहते गैरों के मोहताज होकर,
झुके सिर को ऊँचा उठाया न होता।

गुलामी कहीं का भी रहने न देती,
मजा जीने का कुछ भी आया न होता।

जो अपने बिछड़ते चले जा रहे थे,
उन्हें फिर गले से लगाया न होता।

मुसलमान ईसाई बन जाते सारे,
जो शुद्धि का अमृत पिलाया न होता।

दु:खी नारी बस सिसकियां भरता रहती,
जो दु:ख–दर्द उसका मिटाया न होता।

कोई वाल–विधवा की पीड़ा न सुनता,
दिलो को तड़पना सिखाया न होता।

भवंर में फंसी रहती जाति की नैय्या,
किनारा कहीं देख पाया न होता।

अंधेरों में ही ठाकरें खाते फिरते,
उजालों में जीवन बिताया न होता।

न साकार हो पाते जीवन के सपने,
संकल्पों ने कुछ कर दिखाया न होता।

वेद प्रकाश शर्मा धारीवाल
103 अंकुर–बी, हालर
वलसाड 396001 गुजरात

माता, पिता आचार्य का परमधर्म है कि वे सन्तानों के चरित्र की रक्षा करें

।। ओ३म चरित्रान्स्ते शुन्धामि–वेद।।

विवाह से पूर्व तक युवा सबको बहन व युवतियां सब को भाई कह पुकारें व देखें।

युवाओं के चरित्र रक्षा का सरलतम उपाय है कि "युवक व पुरुष" युवतियों के प्रति शुद्ध भाव रखने हेतु सदा अपने साथ अपनी माता का युवा–अवस्था का पूर्ण श्रृंगार का चित्र पर्स एव शयन कक्ष (बैडरूम) में रख देखा करें व विचारा करें कि अन्य युवतियों का शरीर बाहर–भीतर से मेरी मां जैसा ही है"

"युवतियां व महिलाएं" अपने पिता का पूर्व युवा अवस्था का चित्र अपने पर्स व शयन कक्ष में रखें एवं विचारा करें कि मेरे पिता सा शरीर और युवाओं का भी है।

विवाह से पूर्व ब्रह्मचर्य संयम पालन करने से सुन्दर सन्तान, गृहस्थ का पूर्ण सुख व ओमानन्द मिलता है।

आचार्य नरेश
उद्‌गीथ (हिमाचल प्रदेश)

****

सुविचार

क्यों डरें कि जिन्दगी में क्या होगा,
हर वक्त क्यों सोचें कि बुरा होगा
बढ़ते रहे मंजिलों की ओर हम
कुछ न भी मिला तो क्या?
तजुर्बा तो नया होगा।

कृष्ण मोहन गोयल
113,बाजार कोट, अमरोहा

☞ पृष्ठ 07 का शेष

वेद विदुषी ...

अगले मंत्र में कहा गया है कि जैसे विद्वान् पुरुष मिथ्याचारी मूढ़ विद्यार्थी को नहीं पढ़ाते हैं। ऐसे ही स्त्री–पुरुष मिथ्या आचार विचार और व्यभिचार आदि दोषों से दूर रहकर गृहस्थ आश्रम को श्रेष्ठ बनावें और परस्पर धन का आचरण करें।

अगले मंत्र में लोपामुद्रा शब्द भी पड़ा है।

नवस्य मा रूधतः काम आगन्नित अजातो अमुतः कुतश्चित्।

लोपामुद्रा वृषणं नो रिणाति धीरमधीरा धयति श्वसन्तम्।।4।।

पदार्थ– (इतः) इधर से अथवा (अमुतः) उधर से (कुतश्चित्) कहीं से (अजातः) सब ओर से प्रसिद्ध (रूधतः) वीर्य रोकने वा (नदस्य) अव्यक्त शब्द करने वाले वृषभ आदि का (कामः) काम (मा) मझको (आगत्) प्राप्त होता और (अधीरा) धैर्य से रहित वा (लोपामुद्रा) लोप हो जाना, छिप जाना ही प्रतीत का चिन्ह है जिसका सो वह स्त्री (वृषणम्) वीर्यवान् (धीरम्) धैर्य्यवान् (श्वसन्तम्) श्वास लेते हुए पुरुष को (नीरिणाति) निरन्तर प्राप्त होती और (धयति) उससे गमन भी करती है।

भावार्थ– जो विद्या धैर्य आदि गुणों से रहित स्त्रियों से विवाह करते हैं वे कभी सुख नहीं पाते हैं। जो पुरुष काम रहित कन्या को अथवा काम रहित पुरुष को कुमारी विवाहे वहाँ कुछ भी सुख नहीं रहता है। इसलिए परस्पर प्रीति वाले गुणों में समान स्त्री पुरुष विवाह करें वहाँ ही मंगलमय वातावरण रहता है। अगले मंत्र में बताया गया है कि जो कुपथ्य आचरण करते हैं वे रोगों से जकड़े हुए ही रहते हैं।

अगले मंत्र में अगस्त्य नाम पड़ा है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अगस्त्य का अर्थ निरपराधियों में उत्तम किया है।

अगस्त्यः खनमानः खनित्रैः प्रजामपत्यं बलमिच्छमानः।

उभौ वर्णावृषिरूग्रः पुपोष सत्या देवेष्वाशिषो जगाम।।6।।

पदार्थ– जैसे (खनित्रैः) कुदाल, फावड़ा, कसी आदि खोदने के साधनों से भूमि को (खनमानः) खोदता हुआ कृषक धान्यादि अनाज पाकर सुखी होता है वैसे ब्रह्मचर्य और विद्या से (प्रजासु) राज्य (अपत्यम्) सन्तान और (बलम्) बल की (इच्छमानः) इच्छा करता हुआ (अगस्त्यः) निरपराधियों में उत्तम (ऋषि) वेदार्थ वेत्ता (उग्रः) तेजस्वी विद्वान् (पुपोष) पुष्ट होता है। (देवेषु) विद्वानों में (सत्याः) अच्छे कामों में उत्तम सत्य और (आशिषः) सिद्ध इच्छाओं को (जगाम) प्राप्त होता है वैसे (उभौ) दोनों (वर्णा) परस्पर एक दूसरे को स्वीकार करते हुए पति–पत्नी बनें।

ऋग्वेद के अतिरिक्त लोपामुद्रा यजुर्वेद अध्याय 17 के मंत्र 11 से 15 तक के मंत्रों की भी ऋषिका है। मंत्र संख्या 11 में न्यायाधीश कैसा होना चाहिए इस विषय पर विचार हुआ है–

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽ अरुत्वर्चिषे।

अन्यांस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽ अस्मभ्यं शिवोभव।। यजु. 17.11.

पदार्थ– हे सभापति महोदय। (हरसे) दुःख हरने वाले (ते) आपके लिए हमारा किया (नमः) सत्कार हो। (शोचिषे) पवित्र (अर्चिषे) सत्कार के योग्य (ते) आपके लिए हमारा कहा (नमः) नमस्कार (अस्तु) होवे। (ते) आपकी (हेतय) वज्रादि शस्त्रों से युक्त सेना है वे (अस्मत्) हम लोगों से (अन्यान्) अन्य शत्रुओं को (तपन्तु) दुःखी करें (पावकाः) शुद्धि करने वाले आप (अस्मभ्यम्) हमारे लिए (शिवः) कल्याणकारी (भव) होइए।

अगले मंत्र में बताया गया है कि मनुष्य किन देशों में सुखी रहता है–

नृषदे वेडप्सुषदे वेड्बर्हिषदे वेट्स्वर्विदे वेट्।।2।।

पदार्थ– हे सभापति। आप (नृषदे) नायकों में स्थिर पुरुष होने के लिए (वेड्) न्यायासन पर बैठने (अप्सुषदे) जलों के बीच नौकादि में स्थिर होने वाले के लिए (वेट्) न्यायगद्दी पर बैठने (बर्हिषदे) प्रजा को बढ़ाने वाले व्यवहार में स्थिर होने के लिए (वेट्) अधिष्ठाता होने (वनसदे) वनों में रहने वालों के लिए (वेट्) न्याय में प्रवेश करने और (स्वर्विदे) सुख को जानने वाले के लिए (वेट्) उत्साह में प्रवेश करने वाले हूजिए।

भावार्थ– जिस देश में न्यायाधीश, नौकओं को चलाने वाले, प्रजा को बढ़ाने वाले, वन में रहने वाले, सेना के नायक और सुख पहुंचाने वाले विद्वान् होते हैं वहीं सब सुखों की वृद्धि होती है।

अगले मंत्र में बताया गया है कि इस संसार में अग्नि विद्या को छोड़ देने वाले सन्यासीगण मनुष्यों को वेदार्थ का ज्ञान दिया करें। फिर अगले मंत्र में योगियों के लिए कहा गया है–

ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणः पुर ऽएतारोऽअस्य।

येभ्यो न ऽऋते पवते धाम किंचन न ते दिवो न पृथिव्याऽअधिस्नुषु।। यजु. 12.14.

पदार्थ– (ये) जो (देवाः) पूर्ण विद्वान् (देवेषु अधि) विद्वानों में सबसे उत्तम कक्षा में विराजमान (देवत्वम्) अपने गुण, कर्म और स्वभाव को (आयन्) प्राप्त होते हैं और (ये) जो (अस्य) इस (ब्रह्मणः) परमेश्वर को (पुरऽएतारः) पहिले प्राप्त होने वाले हैं (येभ्यः) जिनके (ऋते) बिना (किम् चन) कोई भी (धाम) सुख का साधन (न) नहीं (पवते) पवित्र होता है (ते) वे विद्वान् लोग (न) नहीं (दिवः) सूर्य लोक के प्रदेशों और (न) न (पृथिव्याः) पृथ्वी के (अधि स्नुषु) किसी भाग में अधिक बसते हैं।

अब अग्नि मंत्र में राजा कैसे हो? यह विषय आया है।

प्राणदा ऽ अपानदा व्यानदा वर्चोदा वरिवोदाः।

अन्यांस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यं शिवोभव।।15।।

पदार्थ– हे विद्वान् राजन्! (ते) आपकी जो उन्नति अथवा शस्त्रादि (अस्मभ्यम्) हम लोगों के लिए (प्राणदाः) जीवन तथा बल को देने वा (अपानदाः) दुःख दूर करने के साधन को देने वा (व्यानदाः) व्याप्ति और विज्ञान को देने (वर्चोदाः) सब विद्याओं को पढ़ने का हेतु को देने और (वरिवोदाः) सत्य धर्म और विद्वानों की सेवा को प्राप्त कराने वाली (हेतयः) वज्रादि शस्त्रों की उन्नतियां (अस्मत्) हम से (अन्याम्) अन्य दुष्ट शत्रुओं को (तपन्तु) दुःखी करें। और उनके सहित (पावकः) शुद्धि का प्रचार करते हुए आप हम लोगों के लिए (शिवः) कल्याणकारी (भव) हूजिए।

इस संक्षिप्त वर्णन में हमने देख लिया है कि लोपामुद्रा वेद विद्या में निष्णात थीं। इतिशम्।

73, शास्त्री नगर, दादाबाड़ी,
कोटा (राजस्थान) 324009

☞ पृष्ठ 09 का शेष

हमारा पर्यावरण ...

आपरेशन करना पड़ा। वह समय–समय पर दवा लेता रहे। यह घोर चारित्रिक पतन का प्रमाण है एवं चारित्रिक प्रदूषण का उदाहरण है। यह सब समाज में चलता है क्योंकि हमारी दण्ड व्यवस्था में ऐसे अपराधियों को पकड़ने और शीघ्र दण्ड देने में समस्या है। चारित्रिक प्रदूषण के उदाहरण सभी व्यवसायों में देखने में आते हैं। यह सब आधुनिक शिक्षा की कमियों को उजागर करता है और उसे कलंकित करता है। ऐसा भी लगता है कि आधुनिक शिक्षा भ्रष्टाचार की पोषक है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मुख्यतः चारित्रिक व नैतिक दृष्टि से संस्कारित व चरित्रवान नागरिक उत्पन्न करना है। व्यवस्था में कमियां तो स्वीकार करनी ही पड़ेंगी। परन्तु दुख इस बात का है कि इस रोग को अभी पहचाना ही नहीं गया है, उपचार कब होगा, होगा या नहीं, कहा नहीं जा सकता।

अतः पर्यावरण की सुरक्षा व उसके खतरों का जब उल्लेख होता है तो उसे सभी पहलुओं से देखना उचित है। रोग पता होने पर ही समाधान हो सकता है। समाधान तभी होगा जब हममें रोग को रोग कहने व उसका उपचार करने की दृढ़ इच्छा शक्ति होगी। कोई भी कार्य असम्भव नहीं होता। असम्भव वहीं होता है जहां इच्छा शक्ति कमजोर होती है। आज अनेक मनुष्य पर्यावरण के शत्रु बने हुये हैं। शत्रुता को छोड़कर सभी को प्रकृति को अपना मित्र बनाना चाहिये और उसके साथ मित्रता का व्यवहार करना चाहिये, इसी में सबकी भलाई है।

पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
दूरभाषः 09412985121

गुरुकुल हरिपुर में निःशुल्क बवासीर चिकित्सा शिविर सम्पन्न

गुरुकुल हरिपुर, जुनानी विगत पांच वर्षों से शिक्षा, सेवा, संस्कार व परोपकार के कार्यों को समय–समय पर गुरुकुल के संचालक डॉ. सुदर्शन देव आचार्य जी के मार्गदर्शन में करते आ रहा है। बवासीर (अर्श) जैसे कष्टप्रद रोग से लोग लाभान्वित हों इस महान् उद्देश्य से गुरुकुल के तत्त्वावधान में द्विदिवसीय निःशुल्क चिकित्सा शिविर का आयोजन 24–25 सितम्बर को सोनपुर जिला के जीवनदादर के जीवन कल्याण आश्रम तथा गुरुकुल हरिपुर परिसर में सम्पन्न हुआ। इस शिविर में 425 रोगी पंजीयन कराये जिसमें से 329 बवासीर रोगी (जर्मन टेक्लोलॉजी) रींग पद्धति सेबिना चीर फाड़ के अपना चिकित्सा कराकर लाभान्वित हुये।

इस शिविर के माध्यम से रोगियों को शाकाहारी बनने के लिये तथा भगवान् का अमूल्य उपहार मनुष्य देह सम्भालकर रखने के लिये भी प्रेरित किया गया। यह समस्त कार्यक्रम गुरुकुल के सम्माननीय आचार्य श्री दिलीप कुमार जिज्ञासु, श्री राजेन्द्र कुमार वर्णी श्री धर्मराज पुरुषार्थी जी के प्रबल पुरुषार्थ तथा श्री विजय कुमार लाहोटी रायपुर के सहयोग से सुसम्पन्न हुआ।

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 21-22 \10 \2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39 \57

पटना प्रक्षेत्र में हुआ श्री कृष्ण जयन्ती समारोह

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग, नई दिल्ली के मार्ग दर्शन से श्री इन्द्रजीत राय स. क्षेत्रीय निदेशक पटना प्रक्षेत्र के द्वारा 15 डी.ए.वी. विद्यालयों में सामूहिक यज्ञ–हवन और वेद–प्रचार के कार्यक्रम के साथ वेदप्रचार सप्ताह मनाया गया।

आर्य समाज मंदिर न्यू बेली रोड, दानापुर पटना के सभागार में श्री कृष्ण जन्माष्ठमी समारोह का भव्य आयोजन पर सामूहिक यज्ञ श्री अरविन्द शास्त्री के ब्रह्मत्व में से प्रारम्भ हुआ। दीप प्रज्ज्वलन, माल्यार्पण एवं स्वागत गान से मंचीय कार्यक्रम शुरू हुआ जिसमें दर्जनों प्राचार्यगण, शिक्षकवृंद, आर्यजनों के अतिरिक्त सैकड़ों विद्यार्थियों ने सोत्साह भाग लिया। इस अवसर पर गीताश्लोकोच्चारण प्रतियोगिता तथा वेदमंत्रोच्चारण प्रतियोगिता का आयोजन आयोजित था जिसमें प्रक्षेत्र के 14 विद्यालयों के विद्यार्थियों ने प्रतिभागी के रूप में भाग लिया।

समारोह के मुख्य अतिथि श्री एस.के. भारद्वाज से. नि. पुलिस महानिदेशक बिहार थे तथा निर्णायक के रूप में प्राचार्य पी. सी. त्रिपाठी, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल विक्रमगंज, डॉ अशोक शास्त्री डी.ए.वी. इंटर स्कूल, दानापुर एवं सत्योम् शास्त्री डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल औरंगाबाद थे।

अतिथियों का स्वागत करते हुए श्री इन्द्रजीत राय जी ने योगीराज श्री कृष्ण के जीवन को राष्ट्र भक्ति से ओत प्रोत, समर्पित और जनोपयोगी बताया। मुख्य अतिथि श्री भारद्वाज जी ने श्री कृष्ण के जीवन से प्रेरित हो दही, दूध माखन की प्राप्ति के लिए गोसंवर्धन, वनसंरक्षण तथा वृक्षारोपण के महत्त्व को अतिआवश्यक बताया।

वेद मंत्रोच्चारण प्रतियोगिता में डॉ. डी. राम डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, गोला रोड, दानापुर, पटना प्रथम, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल वाल्मी कम्पलेक्स फुलवारीशरीफ पटना को द्वितीय तथा डॉ. जी.एल. दत्ता डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कंकड़बाग को तृतीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। गीताश्लोकोच्चारण प्रतियोगिता में डॉ. डी. राम डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, गोला रोड, दानापुर, पटना एवं डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कैंट रोड, खगौल को प्रथम, डॉ जी.एल. दत्ता डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कंकड़बाग को द्वितीय तथा डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल व्यापुर मनेर को तृतीय पुरस्कार मिला।

कार्यक्रम के अन्त में आगत अतिथियों, प्राचार्यों तथा शिक्षकों तथा आर्यो को आचार्य चमूपति की लिखित पुस्तक ''योगेश्वर श्री कृष्ण'' भेंट स्वरूप दी गई तथा प्रतिभागियों को प्रमाणपत्र एवं पुरस्कारों को पुरस्कृत किया गया।

प्रक्षेत्र के सभी प्राचार्य इस समारोह में उपस्थित थे। डॉ वी.एस. ओझा प्राचार्य डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बी.एस.ई.बी. ने धन्यवाद ज्ञापन किया। शांतिपाठ–जयघोष के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ तदोपरान्त समागत सभी लोगों को ऋषिलंगर का पैकेट दिया गया।

आर्ययुवा समाज हिमाचल प्रदेश हुआ सक्रिय

डी.ए.वी. विद्यालय में आर्य युवा समाज के गठन का मूलभूत उद्देश्य विद्यार्थियों को नैतिक तथा संस्कारी बनाना है ताकि वे व्यक्तिगत उत्थान कर समाज सुधार व सशक्त देश निर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकें। आर्य युवा समाज हिमाचल प्रदेश की प्रधान श्रीमती अनुपमा शर्मा के अनुसार राज्य भर के डी.ए.वी. विद्यालयों में प्रधान श्री पूनम सूरी जी के दिशा निर्देशों में, आर्य युवा समाज गठित हुए हैं तथा व्यक्तित्व उत्थान, चरित्र निर्माण, समाज सुधार व देश निर्माण के कार्यों को सफल करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहें हैं।

हिमाचल प्रदेश के डी.ए.वी. विद्यालयों में वेद सप्ताह समारोह का आयोजन अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ किया गया। इस दौरान पूर्ण सप्ताह वैदिक यज्ञ–हवन, वैदिक संध्या, वैदिक मंत्रोच्चारण प्रतियोगिताएँ, श्लोकाच्चारण प्रतियोगिताएँ संस्कृत नाटिका, गीत, सम्भाषण आदि का आयोजन किया गया। इस दौरान डी.ए.वी. सोलन में वैदिक यज्ञ–हवन प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया जिसमें विद्यार्थियों ने उत्साहपूर्वक बढ़–चढ़ कर भाग लिया।

इसके अतिरिक्त डी.ए.वी. विद्यालयों ने पर्यावरण संरक्षण हेतु स्वच्छ भारत अभियान को आगे बढ़ाने के लिए तथा सामाजिक जागृति के लिए अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया। आर्य युवा समाज के माध्यम से सामाजिक कार्यों को आगे बढ़ाने में डी.ए.वी. स्कूल, कांगो, डी.ए.वी. स्कूल सुन्दर नगर, दयानन्द पब्लिक स्कूल, शिमला, डी.ए.वी. स्कूल, लक्कड़ बाजार, मण्डी, डी.ए.वी. स्कूल, न्यू शिमला, डी.ए.वी. स्कूल, ठियोग, डी.ए.वी. स्कूल, कुमारहट्टी, डी.ए.वी. स्कूल, कोटखाई डी.ए.वी. स्कूल, सरस्वती नगर, डी.ए.वी. स्कूल , चम्बा, डी.ए.वी. स्कूल पोंटा साहिब, डी.ए.वी. स्कूल, धर्मशाला, डी.ए.वी. स्कूल, आलमपुर, डी.ए.वी. स्कूल, शोघी, डी.ए.वी. स्कूल नाहन का कार्य सराहनीय रहा।

भविष्य में भी आर्य युवा समाज, हिमाचल प्रदेश अपने डी.ए.वी. विद्यालयों के माध्यम से वैदिक चरित्र निर्माण शिविर, वैदिक योग शिविर, वैदिक चेतना शिविर आदि के माध्यम से विद्यार्थियों में चारित्रिक विकास, नैतिकता का विकास के साथ–साथ सामाजिक जागृति उत्पन्न करने के लिए अनेक गतिविधियों का आयोजन करने के लिए प्रयत्नशील है।

डी.ए.वी. गिदड़बाहा में सप्तदिवसीय वेद प्रचार का समापन

जगन्नाथ जैन डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल गिदड़बाहा के तत्त्वावधान में सप्तदिवसीय वेद प्रचार सप्ताह उत्साहपूर्ण मनाया गया। बच्चों में वेदों के प्रति रुचि जागृत करने , वैदिक हवन व वैदिक ज्ञान को प्रचारित प्रसारित करने, पाखण्डों का खंडन तथा यज्ञ का प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा पंजाब द्वारा वेद प्रचार सप्ताह का आयोजन किया गया। कार्यक्रम ठीक नौ बजे वैदिक हवन के साथ आरंभ होता था जिसमें विद्यालय के प्रधानाचार्या सुश्री मोनिका खन्ना जी ने मुख्य यजमान की भूमिका निभाई। इस कार्यक्रम के अंतिम दिवस पर विद्यालय के प्रबन्धक श्रीमान रघुवीर सिंह प्रधान जी, आर्य समाज के मंत्री श्री मदन लाल जी एवं गिदड़बाहा शहर के गणमान्य लोग उपस्थित थे। इस कार्यक्रम में विद्यार्थियों को आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती जी के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई। कार्यक्रम के दौरान समय–समय पर गीत, भजन, कविता, भाषण प्रस्तुत किए गए। आर्य समाज के मंत्री श्री मदन लाल जी ने सभी को संबोधित करते हुए कहा कि स्वयं आर्य बनें व सभी को श्रेष्ठ आर्यजन बनाएँ। साथ ही कहा कि यह बहुत जरूरी हो गया है कि अध्यापक स्वयं आर्य समाज के विचारों और सिदंधातों से परिचित हों जिससे वे बच्चों में वैदिक मूल्यों की स्थापना करने में सशक्त हो सकें।

कार्यक्रम के अंत में विद्यालय के प्रधानाचार्या सुश्री मोनिका खन्ना जी ने सभी आर्यश्रेष्ठों व विद्यार्थियों को आशीर्वाद देते हुए सभी का धन्यवाद किया।

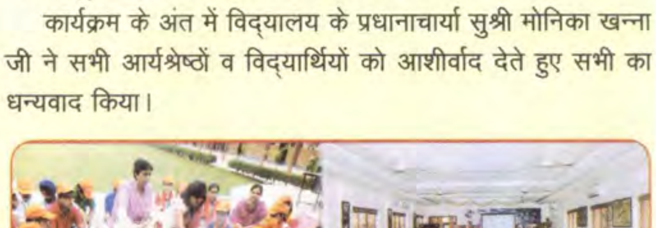

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**